चन्दामामा
अप्रैल १९७८

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "नास्तिक या आस्तिक" है। ईश्वर के प्रति अपार विश्वास प्रकट करनेवाले भी सदा-सर्वदा ईश्वर के भरोसे पर बैठे नहीं रहते। वे लोग अपनी शक्ति तथा अन्य मानवों की शक्ति पर भी कई अंशों तक निर्भर रहते हैं। ईश्वर जमीन्दार के खेत पट्टे पर नहीं लेते; कारखाने नहीं चलाते, इलाज और बढ़ई का काम नहीं करते। इसलिए जो हेतुवादी है, वह ईश्वरीय अपूर्व शक्तियों को मानव के भीतर देखता है। यह भी उस हालत में, जब कि उन शक्तियों द्वारा उसका उपयोग या लाभ होता है।

वर्ष : ३०   अप्रैल १९७८   अंक : ८

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

संश्रुत्य च पितु र्वाक्यं
मातु र्वा, ब्राह्मणस्य वा
नकर्तव्य वृथा (वीर)
धर्म, माश्रित्य तिष्टता ॥ ॥ १ ॥

[धर्म का आचरण करने वाले को चाहिए कि वह अपने पिता माता तथा ब्राह्मण को वचन देकर न टाले।]

गुरुश्च, राजा च, पिता च, वृद्ध :
क्रोधा त्प्रहर्षा द्वदि वापि कामात्,
यद्वादि शेत्कार्य मपेक्ष्य धर्मं
कस्तन्न कुर्या दनृशंस वृत्ति : ॥ २ ॥

[गुरु, राजा, पिता या वृद्ध क्रोध, प्रसन्नता या काम वासना से प्रेरित हो जो आज्ञा देते हैं, उसका पालन न करने वाला पापी होता है।]

न सत्यं दानमाने वा,
न यज्ञा श्चाप्त दक्षिणा :
तथा बलकरा (स्सीते)
यथा सेवा पितृहिता ॥ ३ ॥

[पिता को प्रसन्न करने से जो बल प्राप्त होता है, वह सत्य, दान, दक्षिणा या यज्ञों के द्वारा प्राप्त नहीं होता।]

पिता के वचन–२

काकोलूकीयम

[५७]

रक्ताक्षी ने बढ़ई की कहानी सुनाकर कहा–" दोस्तो, तुम लोग इस कौए की बातें सुनकर धोखा मत खाओ । तुम जैसे बुद्धिमान समझ सकते हैं कि यह कौआ तो हमारे लिए हमेशा के लिए दुश्मन ही है ।"

मगर बाक़ी उल्लुओं ने उसकी सलाह पर ध्यान न दिया । स्थिरजीवी को एक पालकी में बिठाकर पर्वत दुर्ग तक ले गये।

स्थिरजीवी ने राजा से कहा–" हे राजन, आप मेरे प्रति ऐसी दया क्यों दिखा रहे हैं? मैं शर्मिंदा हूँ कि मैं आप का दुश्मन रहा । आप कृपया आग मँगवाइये तो मैं अपने जीवन का अंत कर लेता हूँ ।"

राजा तथा उसके चार मंत्रियों को ये बातें सुनने पर दुख हुआ । उन सबने पूछा–" महाशय, आप आग में कूदकर अपने प्राणों की आहुति क्यों देना चाहते हैं?"

कौए ने जवाब दिया–" ऐसा करने पर मैं फिर कभी कौए का जन्म धारण न करूँगा । उल्लू के रूप में पैदा हो जाऊँगा ।"

रक्ताक्षी को कौए का उत्तर पसंद न आया । उसने कहा–" तुम भले ही उल्लू का जन्म धारण करो, मगर तुम कौओं का पक्ष ही लोगे । उनका ही समर्थन करोगे । पुराने जमाने में चूहे की कन्या आखिर चूहा ही तो बन गई थी ।"

" वह कैसी कहानी है ?" स्थिरजीवी ने पूछा । इस पर रक्ताक्षी ने यों बताया : हिमालयों की तराई में गंगा जहाँ बहती है, वहाँ पर एक आश्रम था । उस आश्रम के अध्यक्ष याज्ञवल्क्य नामक एक ऋषि थे । एक दिन वे गंगा में स्नान करके अपने आश्रम को लौट रहे थे, तब एक चील ने एक चूहे की बच्ची को उन पर गिरा

है। उसने सभी विद्याएँ सीख ली हैं। संगीत जानती है, रसोई बनाती है, अच्छी तरह पढ़ना-लिखना जानती है। उसके योग्य वर की खोज करनी है। इसलिए यदि कन्या मान ले तो सूर्य को निमंत्रण देकर उसके साथ विवाह करना चाहता हूँ।" याज्ञवल्क्य ने अपना विचार बताया।

"अच्छी बात है; आप ऐसा ही कीजिए।" ऋषि-पत्नी ने जवाब दिया।

ऋषि ने सूर्य को ख़बर भेजी। सूर्य ने प्रवेश करके पूछा–"महात्मा! आप ने मुझे बुला भेजा है। आज्ञा दीजिए, मैं आप की क्या सेवा करूँ?"

दिया। दयालू ऋषि ने अपने तपोबल से उस चूहे की बच्ची को एक मानवी कन्या के रूप में बदल दिया और उसे ले जाकर अपनी बांझ पत्नी से कहा–"सुनो, तुम इस बच्ची को ऐसा पालो जैसे यह तुम्हारे गर्भ से पैदा हुई बच्ची हो; समझी!"

ऋषि-पत्नी ने उस लड़की को बड़े ही लाड़-प्यार से पालकर बड़ा किया।

अब लड़की बारह वर्ष पूरी कर चुकी थी। ऋिषि-पत्नी ने याज्ञवल्क्य से कहा–"स्वामी, आप की कन्या विवाह के योग्य हो गई है। आप इसका विवाह कीजिए।"

"हाँ, तुम ठीक कहती हो! शास्त्र के अनुसार उसे विवाह के योग्य आयु आ गई

ऋषि ने सूर्य से कहा–"यह मेरी कन्या है। कृपया इसके साथ विवाह करो।" फिर अपनी कन्या की ओर मुड़कर बोले–"बेटी, तीनों लोकों को प्रकाश देनेवाले इस देवता के साथ विवाह करने के संबंध में तुम्हारा विचार क्या है?"

"पिताजी, ये तो बहुत ही तीक्ष्ण मालूम होते हैं। इसलिए इससे भी कोई बढ़िया संबंध हो तो देख लीजिए।" कन्या ने उत्तर दिया। ऋषि ने सूर्य से पूछा–"तुम से भी बड़ा व्यक्ति कौन है?"

"मुझसे मेघ बड़ा है। वह मुझे एक दम ढक देता है। मेरा पता किसी को होने नहीं देता।" सूर्य ने जवाब दिया।

ऋषि ने मेघ को बुलाकर पूछा—"बेटी, क्या मैं इस बलवान के साथ तुम्हारी शादी करूँ?"

"यह तो काले और नमी मालूम होते हैं। इसलिए इनसे पूछ लीजिए कि इनसे भी बलवान कौन हैं? तब उन्हीं के साथ मेरा विवाह कीजिएगा।"

ऋषि ने मेघ से पूछा—"बताओ भाई, तुम से शक्तिशाली कौन है?"

"क्यों नहीं, वायु तो मुझसे भी शक्ति शाली है। वे तो मुझे इधर-उधर ढकेल सकते हैं?" मेघ ने जवाब दिया।

इसके बाद ऋषि ने वायु को बुला भेजा, तब अपनी पुत्री से पूछा—"बेटी, क्या मैं इनके साथ तुम्हारी शादी कर सकता हूँ?"

"पिताजी, ये तो चंचल हैं, इसलिए हम इनके आश्रय में नहीं रह सकते। इसलिए इनसे भी कोई शक्तिशाली हो तो पता लगाइयेगा।" ऋषि ने वायु से पूछा—"सुनो, तुम से भी कोई बलवान है?"

"मुझसे पहाड़ ज्यादा शक्तिशाली है। मैं उनको हिला नहीं पाता हूँ।" वायु ने उत्तर दिया। इस पर ऋषि ने पर्वत को बुलाकर अपनी कन्या से पूछा—"बेटी, क्या मैं इनके साथ तुम्हारी शादी करूँ?"

"पिताजी! इनका हृदय पाषण है। ये मेरे सौंदर्य पर विचलित नहीं होंगे। इसलिए और किसी के साथ मेरा विवाह क्यों नहीं करते?" बेटी ने समझाया।

"भाई तुम से भी बलवान कौन हैं?" ऋषि ने पर्वत से पूछा।

"मेरे अंदर सुरंग बनानेवाला चूहा मुझसे ज्यादा शक्तिशाली है।" पर्वत ने उत्तर दिया। ऋषि ने चूहे को बुला भेजा। तब अपनी बेटी से पूछा—"बेटी, क्या तुम इसके साथ शादी करोगी?"

उस कन्या में अपनी जाति के प्रति सहज प्रेम जाग उठा। उसने लजाते हुए उत्तर दिया—"पिताजी, मुझे चुहिया के रूप में बदलकर इनके साथ मेरी शादी कीजिए।"

फिर क्या था, ऋषि ने वैसा ही किया।

१९५ मुहल्लों के बीच लिफ्ट

इस लिफ़्ट में चढ़नेवाले कहाँ पहुँच जाते हैं? वे लिस्बन (पुर्तगाल) के एक और मुहल्ले में पहुँच जाते हैं। लिस्बन नगर में विभिन्न मुहल्लों के बीच कुछ "मंजिलों" का अंतर है। पैरिस के "एफिल" मीनार का निर्माण करनेवाले ने ही इस लिफ़्ट का भी निर्माण किया है।

माया सरोवर

[२६]

[शेरसिंह और गणाचारी को बन्दी बनाकर सिद्ध साधक हिरण्यपुर के राजा कनकाक्ष को देखने गया। हंसों के रथ पर से जयशील को जंगल में एक स्थान पर बाघ के मुँह में जानेवाली कांचनमाला दिखाई दी। जयशील ने कांचनमाला की रक्षा की। उस वक्त एक पेड़ की ओट में से माया सरोवरेश्वर ने जयशील के कंठ की ओर एक फंदा फेंका। बाद...]

जयशील अपने कंठ में फंदे के फंसते ही पल भर के लिए चकित रह गया। उसने मुड़कर देखा। उसे जलग्रह पर मायासरोवरेश्वर तथा उसकी बगल में एक घोड़े पर मकरकेतु दिखाई दिये। जयशील संभल गया। अपने कंधे में कसनेवाले फंदे को तलवार से काटना चाहा, फिर रुककर उसने सरोवरेश्वर की ओर देखा।

माया सरोवरेश्वर अपने हाथ में स्थित रस्से को थोड़ा खींचकर जयशील से बोला– "तुम्हीं तो हो न जयशील नामक महावीर? तुमने रस्से को तलवार से काटना चाहा, फिर रुक क्यों गये?"

"हाँ, अब मैं समझ गया, तुम माया सरोवरेश्वर हो न? तुमने मेरे कंठ में फंदा डाला, मगर तुम्हें उस फंदे को कसकर तुरंत मेरे प्राण लेना चाहिए था, लेकिन

तुमने ऐसा क्यों नहीं किया? बताओ तो सही?" जयशील ने पूछा ।

"मैं एक सरोवर का राजा हूँ। इसलिए समझने की कोशिश करो कि मुझे महान महासत्व मानव के प्रश्न का उत्तर देने की कोई जरूरत नहीं है।" माया सरोवरेश्वर ने कहा ।

जयशील क्रोध में आकर कोई जवाब देने को था, पर तब तक चकित हो यह सारा दृश्य देखनेवाली कांचनमाला संभलकर बोली—"मामाजी, तुम हंसों के रथ से गिरकर जीवित हो, इस बात की मुझे बड़ी खुशी हो रही है। मगर तुम जयशील नामक इस युवक की कोई हानि न करो; क्यों कि इन्होंने मुझे बाघ से बचाया है।"

"बेटी, कांचना! मैंने वह सारा दृश्य अपनी आँखों से देखा है। मैं इसका वध करना नहीं चाहता हूँ। प्राणों के साथ इसको मैं माया सरोवर ले जाना चाहता हूँ। इसलिए मैं ने इसे नहीं मारा।" माया सरोवरेश्वर ने उत्तर दिया ।

कांचनमाला ने जयशील की ओर मुड़कर कहा—"मेरे मामाजी आप की कोई हानि करना नहीं चाहते। आप स्वेच्छापूर्वक हमारे साथ माया सरोवर क्यों नहीं चलते?"

"कांचना, इसमें मेरी इच्छा के लिए मौक़ा ही कहाँ रहा? ये सरोवरेश्वर समझते हैं कि मुझे हराकर बन्दी के रूप में ले जा रहे हैं। लेकिन समझने की चेष्टा नहीं करते कि अगर मैं चाहूँ तो इसी क्षण मेरे कंठ में कसे हुए इस रस्से को तलवार के एक ही वार से काट सकता हूँ।" जयशील ने कहा ।

जयशील के मुँह से ये शब्द सुनकर माया सरोवरेश्वर मकरकेतु से बोला—"मकरकेतु, तुम इस जयशील के भागने से रोक दो। इस बीच में फंदे को थोड़ा और कसकर इसे बतला दूँगा कि ज़बर्दस्ती की मौत कैसी होती है?"

इस पर मकरकेतु ने अपने चेहरे की आकृति द्वारा अपनी अनिच्छा प्रकट की। पर उसे अपने राजा के आदेश का पालन करना ज़रूरी था, इसलिए उसने अपने घोड़े को जयशील की ओर बढ़ाया। इसे देख कांचनमाला भय कंपित हो चीख उठी, जयशील के कंठ से लटकनेवाले रस्से को उसने अपने दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया, तब बोली–"मामाजी, आप इस रस्से को खींचकर इनके कंठ को कस लेंगे तो मैं सहन नहीं कर सकती। मैं भी इनके साथ इसी रस्सी से फांसी लगवा कर मर जाऊँगी।"

"उफ़! आश्चर्य! कुछ ही क्षणों में यहाँ तक कहानी पहुँच गई है।" यों कहकर सरोवरेश्वर दो-चार पल तक सर झुकाये सोचता रहा, फिर मन में सोचा–"प्रयत्न करके देखने में गलती ही क्या है? फिर सर उठाकर बोला–"जयशील, तुम अपने कथनानुसार तलवार से तुम्हारे कंठ में कसे रस्से को भले ही तोड़ सकते हो, लेकिन इस जलग्रह से बचकर तुम भाग नहीं सकते! यह अपने पैरों से रौंधकर दाढ़ों से वार करके तुम्हारा अंत कर सकता है।"

"अच्छी बात है! प्रयत्न करके देखो तो सही।" ये शब्द कहते जयशील तलवार उठाकर रस्से को काटने को हुआ, तब मकरकेतु धीमी आवाज़ में बोला–"जयशील, जल्दबाजी मत करो। सरोवरेश्वर के द्वारा तुम को माया सरोवर में ले जाने में एक रहस्य छिपा हुआ है। साथ ही तुम भी तो किसी उपाय से सरोवर पहुँचना चाहते हो न? इस मौक़े से तुम फ़ायदा उठा सकते हो!"

जयशील को लगा कि मकरकेतु उसकी भलाई के वास्ते ही ये शब्द कह रहा है। अब तक राजा कनकाक्ष के बच्चों में से कांचनमाला ही हाथ लगी है। पर राज कुमार कांचनवर्मा अभी तक माया सरोवर में बन्दी है। मगर कांचनमाला अपना

अपहरण करनेवाले माया सरोवरेश्वर को मामाजी कहकर आदरपूर्वक संबोधित कर रही है। इस पर जयशील को आश्चर्य के साथ संदेह भी हुआ।

यों विचार कर जयशील बोला–"अच्छी बात है, माया सरोवरेश्वर! यह साबित हो गया कि तुम मुझसे ज़्यादा बलवान हो, मैं तुम्हारे अधीन हो गया हूँ, पर बताओ, तुम अब मेरे साथ कैसा व्यवहार करने जा रहे हो?"

"तुम्हारे द्वारा इस प्रकार अपनी हार मानने में कोई धोखा तो नहीं है न?" जयशील के चेहरे को परखते हुए माया सरोवरेश्वर ने पूछा।

"जो दुर्बल होता है, वह धोखे का आश्रय लेता है। लेकिन मकरकेतु अब स्वयं समझ गया होगा कि मैं कैसा व्यक्ति हूँ? क्यों मकरकेतु, मैं ठीक कह रहा हूँ न?" जयशील ने कहा।

"मैंने इसके पूर्व ही महाराजा से इस बात का निवेदन किया है कि आप तो महासत्व की श्रेणी के हैं।" मकरकेतु ने उत्तर दिया।

"जयशील, तुम्हारा सत्व कैसा है, यह बात मैं सरोवर में पहुँचने पर देखूँगा। फिलहाल तुम हमारे साथ चल रहे हो न?" ये शब्द कहकर माया सरोवरेश्वर ने मकरकेतु की ओर मुड़कर पूछा–"सुनो, हमने इसके पूर्व एक जलवृक राक्षस को देखा है। न मालूम बाक़ी दुष्ट वहाँ पर कैसा भीभत्स कर रहे हैं?"

"अजी, बताओ, इस वक़्त मेरे कंठ में जो रस्सा कसा हुआ है, इसकी बाबत क्या है?" जयशील ने पूछा।

माया सरोवरेश्वर के द्वारा जवाब देने के पहले ही कांचनमाला ने मुस्कुराते हुए जयशील के कंठ से फंदा निकाला और कोमल स्वर में बोली–"यह फांसी का फंदा नहीं, मेरे मामाजी के द्वारा आप के कंठ में पहनाई गई कमलनालों की माला है।"

"कहानी शीघ्र ही समाप्त होने जा रही है। बेचारी, पद्ममुखी सब प्रकार से बदक़िस्मतवाली है। कम से कम यह व्यक्ति जलवृक राजा का अंत करने में मेरी मदद करे तो मेरा बड़ा उपकार हो सकता है।" माया सरोवरेश्वर ने अपने मन में सोचा।

"महाराज! आदेश दीजिए, अब मैं क्या करूँ?" मकरकेतु ने सरोवरेश्वर से पूछा।

"हम सब सरोवर में जा रहे हैं, तुम आगे रहकर मार्ग दिखाते जाओ।" माया सरोवरेश्वर ने कहा।

"जयशील क्या पैदल ही हमारा अनुसरण करते आ सकते हैं?" मकरकेतु ने इन शब्दों के साथ जयशील की ओर देखा।

"कांचना मेरे साथ जलग्रह पर सवार हो चली आयेंगी। तुम और जयशील घोड़े पर चले आओ।" माया सरोवरेश्वर ने सुझाया।

जयशील यह समाचार सुन कर चौंक गया कि कांचनमाला फिर से सरोवर में ले जाई जा रही है। मकरकेतु से बोला– "मकरकेतु! कांचनमाला को फिर से मायासरोवर में ले जाना मैं पसंद न करूँगा। मैं ने राजा कनकाक्ष को वचन दिया है कि अपहरण किये गये उनके बच्चों को शीघ्र ही लाकर सौंप दूंगा। ऐसी हालत में कांचनमाला जो हाथ लगी, इसे फिर से बन्दी बनाना मैं नहीं मानूंगा।"

माया सरोवरेश्वर ने क्रोध भरी दृष्टि से जयशील की ओर देखा। कांचनमाला भी क्रोध पूर्वक जयशील की ओर देख बोली–"यह बात सही है कि मैं और मेरे भाई जंगल से अपहरण किये हुए हैं, मगर हम किसी के बंधन में नहीं हैं। मैं अपने भाई के बिना अकेले अपने माता-पिता के पास कैसे जा सकती हूँ? आप से बन पड़ा तो मेरे भाई को आप बंधन से विमुक्त कीजिए।" यों कह कर वह

तेजी के साथ जलग्रह के पास पहुँची। माया सरोवरेश्वर के हाथ का सहारा पाकर जलग्रह पर बैठ गई।

जयशील ने विस्मय में आकर पूछा— "मकरकेतु, यह सब मुझे आश्चर्य जनक मालूम होता है। राजा के बच्चों का अपहरण करना, माया सरोवर इत्यादि बातें सब झूठ तो नहीं हैं?"

"आप इसी वक़्त, घोड़े पर सवार हो जाइये; सरोवर में पहुँचने पर सारी बातें अपने आप समझ सकते हैं।" मकरकेतु ने जवाब दिया।

जयशील चुपचाप मकरकेतु के घोड़े पर उसके पीछे जा बैठा। माया सरोवरेश्वर ने जलग्रह को हांक दिया। वह तेजी के साथ आगे चलने लगा। उसके पीछे मकरकेतु अपने घोड़े को दौड़ाने लगा। उस वक़्त हठात् जयशील को सिद्ध साधक की याद हो आई। सिद्ध साधक ने भी बहुत दिन उसके साथ जंगलों में कष्ट झेले थे। अचानक उसके गायब होने पर न मालूम वह क्या समझता होगा? कहीं वह मुझे मरा हुआ न समझ बैठे? अगर वह यह सोचे तो क्या होगा कि हंसों के रथ पर स्थित उसका बचपन का दोस्त देवशर्मा के साथ में भी कांचनमाला की रक्षा करने जाकर बाघ का शिकार बन बैठा हूँ? उफ़! अब क्या किया जाय?"

इधर जयशील इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था। उधर अश्व दल का नेता वीरसेन अपने साथ सिद्ध साधक को जंगल में राजा कनकाक्ष के डेरे पर ले गया। राजा ने उसे पहचान लिया और पूछा—"सुनो, तुम्हारे साथ बच्चों की खोज में गया जयशशील नामक वह युवक कहाँ पर है? तुम लोग बहुत दिनों तक जब न लौटे, तब मैं अपना राज्य मंत्रियों के हाथ सौंप कर जंगलों में अपने बच्चों की खोज कर रहा हूँ।"

"महाराज! युवराजा तथा युवरानी का अपहरण करनेवाले लोग माया सरोवर

नामक स्थान पर निवास करनेवोले विचित्र मनुस्य हैं। वे लोग पानी में और पानी के बाहर भी यथा प्रकार जीवित रह सकते हैं। हमने उनमें से कुछ लोगों को बन्दी बना रखा है। उनका राजा माया सरोवरेश्वर पहले नर भक्षी लोगों के हाथों में पड़ गया था। फिर मेरे भी हाथ फंस गया, मगर बचकर भाग गया है। फिर भी चिंता की कोई बात नहीं है। उसी माया सरोवर के एक और स्थान का निवासी जलवृक राक्षस मेरा सेवक बन गया है। इसके द्वारा हम पता लगा सकते हैं कि वह सरोवर कहाँ पर है?"

"ओह, ऐसी बात है?" ये शब्द कह कर राजा कनकाक्ष ने पत्थरवाला गदा अपने कंधे पर रख लिया। सिद्ध साधक के पीछे खड़े जलवृक को देख पूछा—"बताओ, जयशील कहाँ है?"

"जयशील माया सरोवर के दो राजसेवकों के साथ मिल कर हंसों के रथ पर सवार हो जंगल में उस राजा की खोज कर रहे हैं, लेकिन वे यह बात नहीं जानते कि माया सरोवर का राजा मेरे हाथों में आकर भाग गया है।" सिद्ध साधक ने उत्तर दिया।

"हंसो का रथ?" ये शब्द दुहरा कर राजा कनकाक्ष और उनके कर्मचारी विस्मय में आ गये। जल राक्षस, नर वानर, नाटे लोग, मनुष्य भक्षी वृक्ष, एक क्या, ऐसी अनेक अद्भुत बातें हम लोग नगर छोड़ कर जंगल में प्रवेश करने पर देख सकते हैं!" सिद्ध साधक ने समझाया।

उसी वक्त थोड़ी दूर पर पेड़ों के नीचे कोई कोलाहल प्रारंभ हुआ। वहाँ के दो सिपाहियों के साथ नर भक्षी बात कर रहे थे। वे लोग कह रहे थे कि उन्हें कोई गुप्त बात मालूम हो गई है, इसलिए उन्हें नर वानर पर सवार हो भ्रमण करनेवाले भूतों के नेता के पास ले जाया जावे!

सिपाही उनसे सहज ढंग से पूछ रहे थे–"तुम लोग कौन हो? कहाँ से आये हो?"

सिद्ध साधक ने एक राज सेवक को आदेश दिया–"तुम उस कोलाहल का पता लगा कर उन दोनों व्यक्तियों को मेरे पास लेते आओ।"

थोड़ी देर में दो नर भक्षी सिद्ध साधक के निकट पहुँचे। उसके पैरों पर गिर कर बोले–"महानुभाव! आप हमारे नेता और पुजारी गणाचारी को मुक्त करेंगे तो हम आपको एक बहुत ही बड़ा रहस्य बतायेंगें।"

साधक के मन में संदेह हुआ कि ये लोग किसी ज़बर्दस्त रहस्य का पता ले आये हैं, तब उस ने जलवृक राक्षस को आदेश दिया कि वह घोड़ों से बंधे दो नर भक्षियों को बंधन-मुक्त करके उनके सामने हाज़िर करे। जलवृक ने जाकर शेरसिंह और गणाचारी को बंधनों से मुक्त किया, दोनों को दो हाथों पर उठाये ले आया और सिद्ध साधक के सामने खड़ा किया। सिद्ध साधक ने नर भक्षियों से पूछा–"बताओ, तुम कौन-सा रहस्य बताना चाहते हो?"

"भूतों के नेताजी! आपके हाथों से बचकर भागने वाले मगरमच्छ चेहरेवाले तथा विचित्र हाथी पर सवार हो आये हुए व्यक्ति की हम लोग खोज कर रहे थे, तब उन लोगों ने आप जैसे एक मानव और एक लड़की को देखा। हम लोग यह सोच कर शंका कर रहे थे कि उन पर हमला करके बंदी बनाना शायद ख़तरनाक सिद्ध होगा, यह सोच कर पेड़ों की ओट में हम छिपे बैठे थे, तभी विचित्र हाथी वाला और मगरमच्छ चेहरेवाले उन दोनों को अपने वाहनों पर बिठा कर पहाड़ों की ओर भाग गये। एक बात और है-हंसों के रथ से उतरनेवाले कुछ लोग पूरबी दिशा में यहाँ से पाँच कोस की दूरी पर किन्हीं लोगों की खोज कर रहे हैं।" नर भक्षियों ने समझाया।

(और है)

नास्तिक या आस्तिक

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, कोई आदमी या तो आस्तिक होता है या नास्तिक! लेकिन मैं आप को एक ऐसे विचित्र आदमी की कहानी सुनाता हूँ, जिसमें एक आदमी दोनों था। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: एक शहर में जगन्नाथ नामक एक अमीर था। वह गरीबों और विपत्तियों में फंसे लोगों की मदद करता था। लेकिन वह एक पक्का नास्तिक था। मंदिरों में देवताओं की पूजा करने में उसका कोई विश्वास न था। उसका केवल यही विश्वास था कि यथा शक्ति दूसरों की सहायता करने में उसका जन्म सार्थक होगा।

बेताल कथाएँ

एक बार जगन्नाथ का दूसरा पुत्र किसी विचित्र बीमारी का शिकार हो गया। उसकी बोली बंद हो गई। नगर के वैद्य उसकी बीमारी का निदान न कर पाये। जगन्नाथ के मित्र और रिश्तेदारों ने उसे यही सलाह दी–"तुम नास्तिक बन गये हो, इसीलिए ईश्वर तुम्हारी परीक्षा ले रहे हैं। तुम अपनी करनी पर पश्चात्ताप करके ईश्वर से मनौती करो, तुम्हारे बेटे की तबीयत ठीक हो जाएगी।"

इस पर जगन्नाथ ने साफ़ कह दिया– "नास्तिक होने की वजह से मैंने ईश्वर या किसी मानव के प्रति कोई अपकार नहीं किया है। जो लोग ईश्वर पर विश्वास नहीं करते हैं, उनको सतानेवाले कैसे ईश्वर हो सकते हैं? मैं ईश्वर से किसी चीज़ की माँग नहीं करूँगा।"

जगन्नाथ की पत्नी को अपने पति का यह हठीलापन पसंद न आया। उसने ईश्वर से यह मनौती की कि उसका पुत्र अगर फिर से बोलने लग जाएगा तो वह ईश्वर की हुंडी में एक हज़ार रुपये डाल देगी। पर इसका कोई फल न निकला, जिससे ईश्वर के प्रति उस औरत का भी विश्वास जाता रहा।

इस बीच देश में एक प्रत्यक्ष देवता प्रकट हुआ। लोगों में यह प्रवाद चल पड़ा कि वह स्वामी कई तरह की महिमाएँ रखनेवाले हैं। अंधे लोगों को दृष्टि दिलाते हैं, यह अफ़वाह सुनने पर जगन्नाथ की पत्नी के मन में फिर से आशा जगी। उसने अपने पति से कहा–"हम अपने लड़के को उस स्वामी के यहाँ ले जायेंगे, शायद उसकी बीमारी दूर हो जाय!"

जगन्नाथ ने हँसकर जवाब दिया– "मनुष्य का देवता बनना कैसा? साधू-सन्यासी अगर बीमारियाँ चंगा कर सकते हैं तो वैद्यों की क्या ज़रूरत है? यह सब धोखा है। मैं यक़ीन नहीं कर सकता।"

अपने विश्वास के आधार पर जगन्नाथ ने अपने पुत्र को कई गाँवों और शहरों में

ले जाकर वहाँ के वैद्यों को दिखाया, लेकिन कोई फ़ायदा न रहा ।

इस बीच महाभिषक नामक एक वैद्य देशाटन करते जगन्नाथ के गाँव में आ पहुँचा । लोग आपस में कहने लगे कि यह वैद्य इस गाँव में सिर्फ़ दस ही दिन रहनेवाले हैं । उन्होंने सब तरह की बीमारियाँ दूर की है । लोग भीड़ बांधकर उस वैद्य के पास इलाज कराने जाने लगे । जगन्नाथ ने भी अपने पुत्र को वैद्य के पास ले जाकर दिखाया । वैद्य ने लड़के की जांच करके तीन गोलियाँ दीं और रोज एक गोली खिलाने की सलाह दी ।

पहली गोली के खाते ही लड़का थोड़ी-सी आवाज़ करने लगा । दूसरी गोली के खाते ही लड़का बोलने लग गया । तीसरी गोली खिलाने के बाद जगन्नाथ वैद्यराज महाभिषक से मिलकर बोला–"महात्मा! आप कोई साधारण आदमी नहीं हैं ।"

महाभिषक मुस्कुराकर बोला–"भाई, यह महिमा तो उन दवाइयों की है, मेरे पास तो असाधारण बीमारियों की दवाएँ हैं । इसलिए मैं किसी एक गाँव में न टिककर जहाँ-जहाँ असाधारण बीमारियाँ हैं, वहाँ जाकर उन्हें ठीक किया करता हूँ । मैं अपने इलाज के बदले में लोगों से उतना ही लेता हूँ जितना वे ख़ुशी से दे पाते हैं । वह धन मेरे देशाटन में काम देता है ।"

जगन्नाथ ने वैद्यराज को एक हज़ार रुपये सौंप दिये और उनके पैरों पर गिरकर कहा–"महात्मा, मैं आज तक यही समझता रहा कि ईश्वर नहीं है, लेकिन मेरी दृष्टि में आप ही ईश्वर हैं ।"

महाभिषक ने पूछा–"तो क्या ईश्वर पर तुम्हारा कोई विश्वास नहीं है? तब तो तुमने प्रत्यक्ष देवता के दर्शन नहीं किये होंगे । उनके दर्शन करने पर ईश्वर के प्रति तुम्हारा विश्वास ज़रूर जम जाएगा । प्रत्यक्ष देवता केवल वे ही एक हैं । मैं उनका भक्त हूँ! उनके आदेशानुसार ही मैं इस प्रकार देशाटन कर रहा हूँ । तुम

एक बार उनके दर्शन कर लो।" जगन्नाथ महाभिषक के आदेश पर स्वामी को देख आया। अपनी पत्नी से कहा– "स्वामीजी तो हम जैसे एक आदमी हैं। मैं नहीं समझता कि लोग उन्हें देवता क्यों मानते हैं? प्रत्यक्ष देवता तो केवल महाभिषक एक ही हैं।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन! जगन्नाथ को आस्तिक मानना चाहिए या नास्तिक? जिसने कभी मंदिर में जाकर ईश्वर को प्रणाम नहीं किया, वह महाभिषक में देवता के दर्शन कैसे कर पाया? महाभिषक ने स्वयं कहा था कि उसके भीतर कोई महिमा नहीं है, प्रत्यक्ष देवता तो वही स्वामीजी हैं, फिर भी जगन्नाथ उस स्वामी के भीतर ईश्वर को क्यों नहीं देख पाया? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "देवता के तो कोई प्रमाण नहीं है। यह भी नहीं बता सकते कि देवता किसको किस रूप में दिखाई देते हैं! भिन्न भिन्न धर्मवाले एक धर्म के देवता का तिरस्कार कर उन धर्मावलंबियों को नास्तिक मानते हैं। जगन्नाथ तो दूसरों का उपकार करनेवाला व्यक्ति है। जिन लोगों का देवता पर पूर्ण विश्वास होता है, वे लोग सारा भार अपने देवता पर छोड़ देते हैं। जगन्नाथ ने ऐसा नहीं किया, इसलिए वह नास्तिक है। महाभिषक ने ऐसे कार्यों को दृढ़तापूर्वक करने का संकल्प किया जिसे देवता न कर पाये और मनौतियों के द्वारा भी जो बीमारियाँ दूर न हो पाई थीं, इसी कारण जगन्नाथ को महाभिषक के भीतर देवता के दर्शन हुए। जिसे खोजते लोग जाते हैं, उन्हें उपदेश देनेवाले स्वामीजी के भीतर जगन्नाथ को साधारण मानव ही दिखाई दिया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

धोखे की सजा

एक गाँव में शरभ नामक एक चरवाहा था। उसके पास जायदाद के नाम से सिर्फ़ चार गायें थीं। वह रोज़ उन गायों को चराने के लिए ले जाता, किसी पेड़ या टीले पर बैठकर बंसी बजाते अपना वक़्त बिता देता था।

एक दिन वह एक पेड़ पर बैठे बंसी बजा रहा था, तब समीप में ही उसे बाघ के गरजने की आवाज सुनाई दी। उसने चौंककर अपनी गायों की ओर देखा, मगर वहाँ पर एक अनोखे दृश्य को देख वह चकित रह गया। शरभ की चारों गायें एक बाघ को घेरकर उस पर अपने सींग मार रही हैं। बाघ गायों से बचकर भागने की कोशिश कर रहा है। मगर गायों ने उसे भागने का मौक़ा न दिया, अंत में उसे मार डाला। इस दृश्य को देख शरभ विस्मय में आ गया।

शरभ अपनी गायों की हिम्मत देख घमण्ड में आ गया। गायें फिर यथा प्रकार घास चरने लगीं, मानो उन पर कुछ बीता ही न हो!

इसके थोड़े दिन बाद शरभ के गाँव में बरसात न होने से चारे के मैदान सूख गये। मवेशियों को चारा मिलना मुश्किल हो गया। चारे के अभाव में गायें दिन ब दिन सूखने लगीं।

शरभ से यह देखा न गया। वह अपनी गायों को हांककर दूर के एक पहाड़ी प्रदेश में गया, वहाँ के मैदान में घास ऊँची उगी हुई थी। उसे इस बात का आश्चर्य हुआ कि इस घास को चरने के लिए क्या इस प्रदेश में गायें नहीं हैं? यही सोचते शरभ एक कोस की दूरी पर स्थित एक गाँव में पहुँचा और उसने उस गाँव में अपना स्थिर निवास बना लिया।

कृष्णकांत निगम
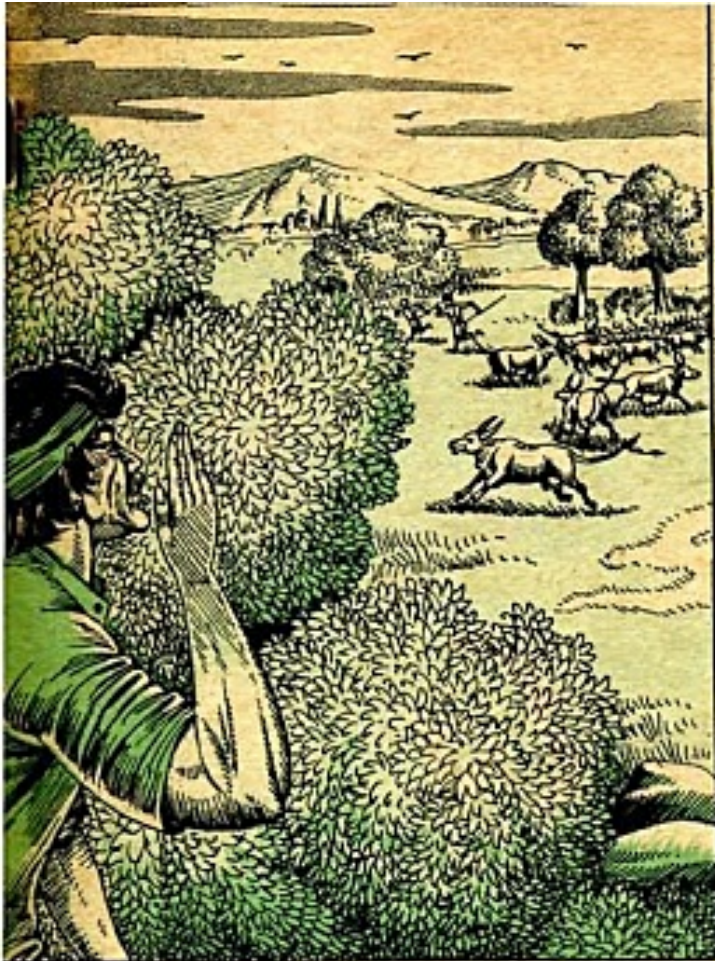
उस गाँव में मवेशियों की कोई कमी न थीं, पर सारे जानवर सूखकर कांटा हो गये थे। शरभ की समझ में न आया कि आखिर बात क्या है?

शरभ ने गाँववालों से पूछा–"पहाड़ पर घास की भरमार है। लेकिन तुम्हारे गाँव के जानवर इस तरह सूखकर कांटा हो गये हैं जैसे नदी में यात्रा करनेवाला प्यास के मारे मर गया हो। आखिर इसकी वजह क्या है?"

"भाई, हम लोग क्या बतावें? पहाड़ के चारों तरफ़ के घास के मैदान में बाघ और सिंह पहुँच गये हैं। वहाँ पर जो भी जानवर घास चरने जाता है, वह फिर से दिखाई नहीं देता। इसलिए हम अपने पशुओं को उधर जाने नहीं देते। तुम्हें भी अपनी गायों को नज़दीक में ही चराना उचित होगा।" गाँववालों ने शरभ को समझाया।

"मेरी गायों को बाघ या सिंह कुछ बिगाड़ नहीं सकते। वे अपनी रक्षा आप कर सकती हैं। आप लोग उनके बारे में नहीं जानते।" शरभ ने समझाया।

गाँववालों ने अपने आप में सोचा–"बेचारा यह आदमी यहाँ की हालत नहीं जानता। यह अपनी गायों से हाथ धो बैठेगा। यह कोई मूर्ख मालूम होता है।"

बात यह थी कि पहाड़ के पीछे गर्जसिंह नामक एक डाकू था जो बाघ और सिंह जैसे चिल्ला सकता था। गाँव के पशु जब चरने के लिए पहाड़ के पास आ जाते, तब वह घास में छिपे रहकर बाघ जैसे गरज उठता और उन्हें गाँव से दूर भगा ले जाता, तब पहाड़ के उस पार ले जाकर वहाँ के गाँवों में बेच देता, इस तरह वह धन जोड़ने लगा। जब वह बाघ या सिंह के जैसे गरज उठता, तब डर के मारे चरवाहे गाँव में भाग जाते। इस तरह गाँव के कई पशु खो गये। तब से गाँववाले उस ओर मवेशियों को चराने ले जाने की हिम्मत न कर पाये।

यह बात शरभ न जानता था। वह सिर्फ़ यही जानता था कि उसकी गायें बाघ और सिंह से नहीं डरतीं।

डाकू गजसिंह को इधर कई दिनों से चुराने के लिए जानवर न मिले तो वह परेशान था। इस हालत में उसने एक दिन शरभ की गायों को देखा। वे गायें खूब मोटी-ताजी थीं। उनका मालिक शरभ एक पेड़ के तने पर बैठकर बेफ़िक्र बँसी बजाते उसे दिखाई दिया।

डाकू गजसिंह ने उन गायों को हड़पने का निश्चय कर लिया। उसने अपनी योजना बनाई कि किन झाड़ियों में छिपने से वह अपना काम आसानी से साध सकता है। दूसरे दिन गायों के आने के पहले ही वहाँ पहुँचकर डाकू गजसिंह एक झाड़ी में बैठ गया।

शरभ की गायें उस प्रदेश में आकर चरने लगीं। शरभ ने बंसी बजाना शुरू किया। थोड़ी देर बाद उसे बाघ का गर्जन सुनाई दिया। लेकिन वह घबराया नहीं, उसने अपनी गायों की ओर देखा। उसकी कल्पना के अनुसार एक झाड़ी को घेरकर सर झुकाये झाड़ी में से बाघ के निकलते ही उसे सींगों से मारने के लिए तैयार खड़ी थीं। शरभ बंसी बजाना छोड़ उस विचित्र दृश्य को देखता रह गया।

इस बीच डाकू गजसिंह को एक विचित्र अनुभव होने लगा। उसका गर्जन सुनकर गायें भागी नहीं, बल्कि इस तरह उसकी झाड़ी के निकट आ गई हैं, मानो उनका स्वागत किया जा रहा हो! डाकू यह सोचकर कि बाघ के गर्जन से गायें डरती नहीं, वह सिंह की तरह गर्जन करने लगा।

गायें उस गर्जन को सुनकर भी डरी नहीं, बल्कि अपने खुरों से धरती को खुरचकर इस तरह दिखाई दीं, मानो यह कह रही हो कि तुममें हिम्मत हो तो सामने आ जाओ; हम तुम्हारी जान लेकर ही छोड़ेंगी।

डाकू को यह समझते देर न लगी कि गायों के हाथ लगने से दूर रहा, बल्कि उसकी जान पर ही आ पड़ी है। फिर क्या था, उसका बदन पसीने से तर हो गया। वह थोड़ी देर बाघ जैसे, फिर सिंह जैसे बदल-बदलकर गरजने लगा। तिस पर भी कोई फ़ायदा न रहा।

मगर वह गर्जन सुनकर गाँव में घास चरनेवाले जानवर भड़ककर चारों ओर भागने लगे। जो जानवर बंधे थे, वे अपने पगहों को तोड़कर भाग गये।

गाँव के लोग उनकी खोज में इधर-उधर भागने लगे। इस बीच शरभ गाँव की ओर दौड़कर आ पहुँचा। गाँववालों को समझाया–"मेरी गायों ने बाघ और सिंह को पकड़ लिया है, तुम लोग आकर देख लो।" यों समझाकर कुछ लोगों को अपने साथ ले गया। वे लोग अपनी जान हथेली पर रखकर शरभ के पीछे डरते-डरते चल दिये। जब शरभ उस झाड़ी के पास जाकर रुका, जिसे उसकी गायों ने घेर रखा था, तब गाँववालों ने अचरज में आकर पूछा–"शरभ, बताओ तो बाघ कहाँ पर है?"

"वह इतनी जल्दी थोड़े ही बाहर निकलेगा? क्या मेरी गायें उसे चीर न डालेंगी? तुम लोग उस झाड़ी पर पत्थर फेंक दो! बाघ और सिंह जैसे गरजनेवाला जानवर झाड़ी में से बाहर निकलेगा।" शरभ ने समझाया। जब कई लोग झाड़ी पर पत्थर बरसाने लगे, तब शरभ की गायें झाड़ी में से बाहर आ गईं। सिर व बदन में खून के बहते डाकू गर्जसिंह झाड़ी में से बाहर निकला और गाँववालों के पास पहुँचकर उनके पैरों पर गिर पड़ा।

जब गाँववालों को यह पता चला कि इसी डाकू ने उनके मवेशियों को चुराया है, तब सब ने उसे पीट-पीटकर अध मरा कर दिया। उस दिन से शरभ उस गाँव का सरदार बन गया। इसके बाद गाँव के मवेशी पहाड़ के नीचे के मैदानों में चरकर खूब मोटे-ताजे बन गये।

उपदेश

मंगाराम नगर का सबसे बड़ा धनी है। उस के पास एक दिन एक याचक आ पहुँचा।

उसे देखते ही मंगाराम बोला—"आइये, पधारिये!" याचक यह सोच कर फूला न समाया कि उसे भारी रक़म मिलने वाली है। मंगाराम तपाक से बोला—"मैं ने दो लाख रुपये ख़र्च करके यह मकान बनवाया है।"

"वाह, यह मकान बड़ा सुंदर है।" याचक ने कहा। इसके बाद मंगाराम ने याचक को सारा मकान दिखाया, आख़िर एक कमरे में ले जाकर तिजोरी दिखाई, उस में स्थित गहने व रुपये दिखाये। दूसरे कमरे में ले जाकर चान्दी के सामान तथा अन्य कमरों में ले जाकर धान के बोरे और अन्य सामग्री दिखाई।

"आप तो लक्ष्मी देवी के वरद पुत्र हैं जी!" याचक ने खुशी में आकर कहा।

इसके बाद मंगाराम उसे पिछवाड़े में ले गया और बोला—"यह सारी जायदाद मैं ने मेहनत करके कमाई है। याचना करके नहीं, समझें।" तब पिछवाड़े का दर्वाजा खोलकर बोला—"आप इस रास्ते से अब जा सकते हैं।" याचक चुपचाप चला गया।

देवता का चन्दा

रामापुर का जमीन्दार पक्का कंजूस था। वह मिलनसार भी न था। मगर उसकी पत्नी इसके बिलकुल विपरीत स्वभाव की थी। वह बड़ी ईश्वर भक्त भी थी।

एक बार उस गाँव के राम मंदिर का विस्तार करने और राम नवमी का उत्सव भारी पैमाने पर मनाने का निश्चय हुआ और इसके वास्ते चन्दा वसूल करने का भी निर्णय हुआ। इस कारण मंदिर के निधि पालक सब से पहले जमीन्दार के घर चन्दा वसूलने पहुँचे। उन्हें इस बात का यक़ीन न था कि जमीन्दार चन्दा देगा। मगर इस आशा से वे पहुँचे कि जमीन्दार की पत्नी उसके जरिये जरूर चन्दा दिलायेगी।

निधि पालकों के चन्दा माँगने पर जमीन्दार ने चन्दा देने से तो साफ़ इनकार नहीं किया, लेकिन मीठे शब्दों में बोला– "चन्दा देना कौन बडी बात है? सबसे चन्दा वसूल करके अंत में मेरे पास आ जाइये।"

सबने समझाया–"आप पहले चन्दा देंगे, तब कोई भी चन्दा देने से इनकार न करेगा। इसलिए सबसे पहले आप के पास पहुँच गये हैं।"

जमीन्दार पशोपेश में पड़ गया, पर बोला–"अच्छी बात है! मेरे नाम पर एक हज़ार रुपये का चन्दा लिख लीजिए। मगर बात यह है कि मैं इसी वक़्त नहीं दे सकता।"

"शुक्रिया! आप का वचन देना पर्याप्त है। मगर आप से एक निवेदन है–आप को आज शाम चौपाल के पास पधारना होगा। वहाँ पर सब लोगों को इकट्ठा करके हम चन्दा के बारे में सलाह-मशविरा

माधव वर्मा

करना चाहते हैं। सबके सामने हम घोषित करेंगे कि आप ने एक हज़ार रुपये का चन्दा दिया है। इसके बाद कोई भी चन्दा देनें से कतरायेगा नहीं।" निधि पालकों ने समझाया।

जमीन्दार ने ख़ुशी से उनकी बात मान ली। उनकी बातों से जमीन्दार को ऐसा लगा कि उसे वाकई चन्दा देने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।

इसके बाद निधि पालकों ने जमीन्दार की पत्नी से मिलकर सारी बातें समझा दीं। जमीन्दार की पत्नी जानती थी कि उसका पति वचन तो देता है, पर कभी उसका पालन नहीं करता। इसलिए उसने निधि पालकों से कहा–"आप लोग चिंता न करें; मैं किसी न किसी प्रकार एक हज़ार रुपये दे दूंगी। आप लोग फिर से उनसे पूछ न लीजिएगा।"

"बहन, हम आप की उदारता को जानते हैं, मगर बात यह है कि सबके सामने जमीन्दार साहब के रुपये देने के बाद ही और लोग उत्साह में आकर चन्दा दे देंगे! वरना लोगों से चन्दा वसूलना कठिन है।" निधि पालकों ने समझाया।

उन्हें कोई योजना बताकर जमीन्दार की पत्नी बोली–"अच्छी बात है! मैं ऐसा इंतज़ाम करूँगी जिससे आप लोगों को चौपाल के पास ही एक हज़ार रुपये मिल जायं!"

उस दिन शाम को चौपाल के पास जमीन्दार की अध्यक्षता में एक सभा हुई। निधि पालकों ने सबके सामने यह घोषणा कर दी कि जमीन्दार साहब ने बड़ी उदारता के साथ एक हज़ार रुपये चन्दा देने को स्वीकार कर लिया है, तब जमीन्दार से बोले–"अब यह कार्यक्रम आप अपने चन्दा के द्वारा प्रारंभ कर दीजिए।"

जमीन्दार ने नहीं सोचा था कि सबके समक्ष उससे चन्दा माँगा जायगा, वह घबरा गया। फिर भी ठाठ से बोला– "अच्छी बात है! आप लोग घर आकर ले लीजिएगा।"

जमीन्दार को पता था कि उसकी जेब में दस रुपये से ज्यादा न होंगे। दस रुपये देकर पिंड छुड़ाने के ख्याल से उसने जेब में हाथ डाला। हाथ में कागज़ों का कोई बण्डल लगा। अचरज में आकर उसने उस बण्डल को बाहर निकाला। सब सौ रुपये के नोट थे। गिनकर देखा, ठीक दस थे।

"ओह! जमीन्दार साहब एक साथ पूरी रक़म दे रहे हैं! आप तो दान कर्ण हैं।" यों कहकर निधि पालकों ने तालियाँ बजाकर अपना हर्ष प्रकट किया और वहाँ उपस्थित सभी लोगों से तालियाँ बजाने को कहा।

जमीन्दार अब मुसीबत में फंस गया और एक हज़ार रुपये उनके हाथ धर दिये। इसके बाद चन्दे की वसूली तेजी के साथ चली।

जमीन्दार ने घर लौटकर अपनी पत्नी से पूछा–"मेरी जेब में एक हज़ार रुपये कहाँ से आ गये? क्या तुमने तो नहीं रखे?"

"जी हाँ, मैं यह कहना ही भूल गई। थोड़ी देर पहले किसानों ने अनाज का दाम एक हज़ार रुपये लाकर दिये, उन्हें मैंने आप की ज़ेब में रख दिया। मगर काम की जल्दी में यह बात बताना भूल गई। क्यों जी! रुपये ठीक हैं न? कम तो नहीं हैं न?" जमीन्दार की पत्नी ने पूछा।

धोखे की साजा

एक अमीर ने गहने बनाने के ख़्याल से एक सुनार के हाथ कुछ रुपये दिये। जल्दी ही गहने तैयार हो गये, पर अमीर से सुनार को आठ सौ रुपये और मिलने थे। अमीर ने बताया—"मंगलवार के दिन मैं अपने छोटे भाई के हाथ आठ सौ रुपये भेज देता हूँ, तुम उसके हाथ गहने दे दो।" सुनार ने कहा—"मैं तो आपके छोटे भाई को नहीं जानता!" अमीर बोला—"जो रुपये लेकर आएगा, वही मेरा छोटा भाई है।"

यह बातचीत एक धोखेबाज़ ने सुन ली। उस ने मंगलवार के दिन सवेरे आठ सौ रुपये लाकर सुनार के हाथ दिया और गहने मांगा। लेकिन अमीर सोमवार शाम को ही आकर रुपये दे गहने ले गया था। इसलिए धोखेबाज के दगे का सुनार को पता चला। सुनार ने आठ सौ रुपये लिये, घर के अन्दर जाकर सोने के मुलम्मे चढ़े कुछ नकली गहने लाकर धोखेबाज के हाथ थमा दिया और उसे भेज दिया।
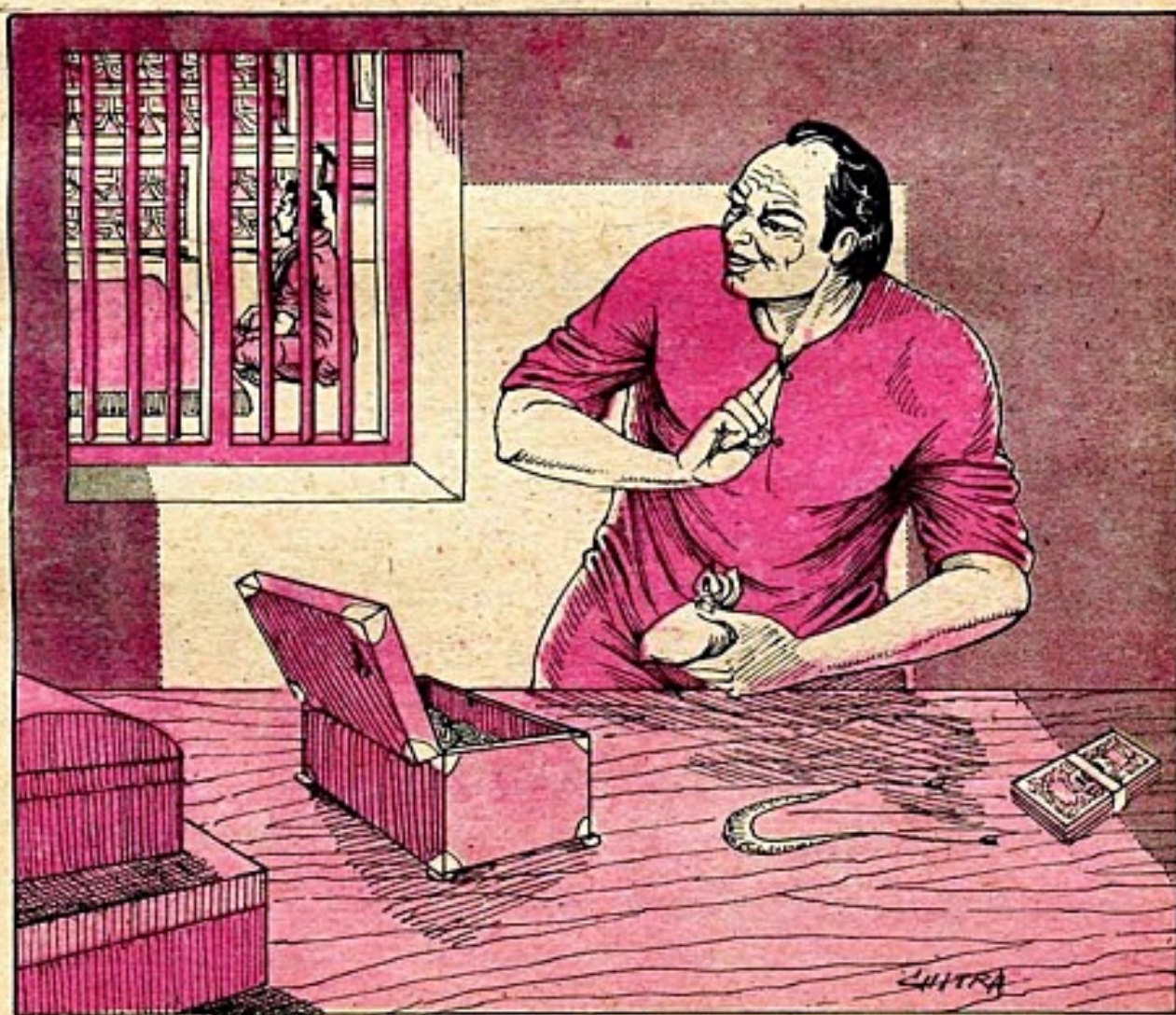
आग का भय

रूपराम नामक राजा सब प्रकार से योग्य था, मगर अंध विश्वासों के प्रति उसकी आस्था अधिक थी। इन अंध विश्वासों के कारण कभी कभी कुछ लोगों को संकट का सामना करना पड़ता था।

एक दिन सवेरे रूपराम ने एक सपना देखा। उस सपने में रूपराम को अग्नि देव ने दर्शन देकर उसके महल की ओर तीक्ष्ण दृष्टि डाली, जिससे उस का महल धक्धक् करते जल उठा।

रूपराम चिल्ला पड़ा—"आग! आग! बचाओ" उसकी चिल्लाहट सुनकर सब लोग दौड़े आये। मगर उस वक़्त राजा की समझ में न आया कि ये सब लोग दौड़ कर उसके पास क्यों आ गये हैं? जब लोगों ने उसकी चिल्लाहट की याद दिलाई तब राजा को अपने सपने की बात ताजा हो उठी। राजा ने अपने मंत्री और पुरोहितों को बुलाकर अपने सपने की खबर सुनाई, मगर उन लोगों ने बताया—"महाराजा! चिंता करने की कोई बात नहीं है।"

राजा ने कहा—"सवेरे जो सपना होता है, वह सच होकर निकलता है।" यह कहकर राजा ने आदेश दिया कि राज महल में कहीं भी आग नहीं सुलगनी है और बत्तियाँ भी नहीं जलानी है।

राजमहल के लोगों का खाना बाहर कहीं तैयार किया गया। इसलिए राजा और रानी को गरम खाना खाने का मौक़ा न मिला। रात को राजमहल में अंधेरा छा गया था। इस कारण इधर-उधर चलने वाले एक दूसरे से टकरा गये और किसी किसी के पैरों में फिसलकर गिरने के कारण मोच आ गई।

राजदरबारियों के सामने यह बड़ी समस्या बन बैठी कि इस दुर्दशा से राज

— श्री. ए. सी. सरकार, जादूगर

महल को कैसे बचावे ! दरबारी जादूगर सोमनाथ ने एक दिन दरबारी पुरोहित से मिलकर अपनी योजना सुनाई–"परेश नामक मेरे एक चाचा दूसरे राज्य में हैं। वे भी जादूगर हैं। हम राजा के साथ उनका परिचय करके बतायेंगे कि उन्होंने अग्नि को अपने वश में कर लिया है। जादू के द्वारा इसे साबित कराकर राजा के मन में इसके प्रति विश्वास पैदा करेंगे और इस तरह राज महल में ऐसा प्रबंध करेंगे जिस से अग्नि का कोई डर न हो।"

सोमनाथ की योजना के अनुसार एक दिन परेश राजदरबार में हाज़िर हो गये। इसके पूर्व ही राजपुरोहित ने राजा को परेश के द्वारा अग्नि को वश में करने की शक्ति का परिचय दिया था। परेश ने उस शक्ति को साबित करने की तैयारी की, उसने एक थैली में से एक कांच की चिमनी निकाली। उसका ऊपरी भाग दो इंच व्यास का था। मेज़ पर एक मोमबत्ती जलाकर रख दी और उस पर चिमनी रख दी। मोम बत्ती थोड़ी देर जलकर बुझ गई। तब चिमनी हटा कर फिर मोमबत्ती जलाई, फिर से चिमनी को मोमबत्ती पर रखा जिस से मोमबत्ती एक दम बुझ गई।

यह प्रयोग करके परेश ने सब से कहा–"जो व्यक्ति चिमनी के रहते मोमबत्ती को जलाये रखता है, उसे मैं सौ सोने के सिक्के दूंगा।"

पर सब लोग मौन रहें।

राजा ने अपने दरबारी जादूगर से पूछा–"सोमनाथ, देखते क्या हो ? कुछ उपाय करो।"

"महाराज, यह जादू से संबंधित क्रिया नहीं है। ईश्वर के अनुगृह के बिना आग वश में नहीं आ सकती। शायद ये महाशय वह शक्ति रखते हैं।" सोमनाथ ने जवाब दिया।

"जी हाँ, मैं वह शक्ति रखता हूँ। मैंने अग्नि की आराधना करके वह मंत्र प्राप्त किया है। लीजिये, देखिये, इस टीन पर वह मंत्र लिखा हुआ है।" इन शब्दों के साथ परेश ने अपनी थैली में से लोहे की वह टीन निकाली। उस पर किसी विचित्र लिपि में कुछ लिखा हुआ था। वह टीन झंडे की आकृति में है। उसे चिमनी के ऊपरी भाग में रख कर टीन को इस तरह लटका दिया जिससे भीतरी ओर लटके रहे; तब फिर से मोमबत्ती जलाई। इस बार मोमबत्ती बराबर जलती रही। मगर उस टीन को हटाते ही बत्ती बुझ गई।

तब टीन की महिमा प्रकट हो गई। राजा और दरबारियों ने उस के महत्व को स्वीकार कर लिया। परेश ने ऐसे अनेक टीन थैली में से निकाले। राजा के हाथ देकर कहा–"जहाँ पर आग होगी, वहाँ इन को रखने से आग का डर न होगा।"

इस के बाद राजमहल में यथा प्रकार रसोई बनने लगी। बत्तियाँ जलाई गईं। इस जादू का प्रयोग सोमनाथ ने ही किया था। चिमनी के भीतर जब मोम बत्ती जलती है तब हवा की प्राणवायु खतम होकर उसका बुझना प्राकृतिक धर्म है। मगर परेश ने चिमनी के ऊपरी भाग को टीन के द्वारा जब दो भागों में बांटा, तब प्राणवायु खोई गई हवा आधे भाग से ऊपर चली गई तो दूसरे अर्ध भाग से नई हवा भीतर पहुँच गई और उसने मोमबत्ती के बुझने से बचाये रखा।

मेहनत का फल

चीन देश में होयांग हो नदी के पास कोयले की एक छोटी सी खान थी। उस खान में से पिंग और चिन नामक दो मजदूर कोयला खोद लाते और उसे शहर में बेचकर अपना पेट पालते थे।

एक दिन वे दोनों खान के दो तरफ़ काम कर रहे थे। कोयले का एक बड़ा टुकड़ा टूटकर पिंग के पैरों पर गिर पड़ा, जिससे पिंग के दोनों पैर दब गये।

चिन उसी वक्त पिंग को अपने कंधे पर उठाकर शहर में ले गया और उसका इलाज कराया। पिंग के दोनों पैर काटकर पट्टी बांध दी गई। पिंग लंगड़ा आदमी बना। अब उसका पेट भरना मुश्किल हो गया।

एक दिन पिंग ने अपने दोस्त चिन से कहा—"दोस्त! मुझे एक बार कोयले की उस खान के पास ले जाओ। मैं खान की देवी से पूछूंगा कि उन्होंने मेरे साथ ऐसा अन्याय क्यों किया है?"

चिन ने पिंग को खान में पहुँचा दिया। पिंग जोर से चिल्लाया—"खान की देवी! हम अपने पेट कैसे भरे? तुम्हीं बताओ!"

खान के भीतर से कोई जवाब नहीं आया। लेकिन अचानक पिंग के सामने एक गठरी आ गिरी। पिंग ने उसे खोलकर देखा। उसमें सोने की गिन्नियाँ थीं।

चिन तब तक पिंग के प्रति सहानुभूति रखता था, मगर अब वह ईर्ष्या से भर उठा। पिंग के पैर टूटे तो क्या हुआ? उसे मेहनत किये बिना जीने का मार्ग मिल गया। यही चिन की ईर्ष्या का कारण था।

दूसरे दिन खान में पहुँचते ही चिन ने फावड़ा दूर फेंक दिया और चिल्ला उठा—"देवी! मेरी भी ज़िंदगी आराम से कट जाय, कोई ऐसा मार्ग दिखाओ।"

ज्योत्स्ना राय

चिन के सामने खान की देवी प्रत्यक्ष हो बोली–"प्यारे चिन, तुम्हें किस बात की कमी है? तुम तो मेहनत करके जीने की ताक़त रखते हो न?"

"माई, में इस तरह कितने दिन मेहनत कर सकता हूँ? मुझे भी कोई ख़जाना दिला दे तो मैं तुम्हारा उपकार कभी भूल नहीं सकता।" चिन बोला।

"क्या तुम भी पिंग जैसे किसी चीज़ को खोने को तैयार हो?" देवी ने पूछा।

चिन ने मान लिया। तब देवी बोली–"तब तो तुम घर चले जाओ। अपने बेटे की आँखों में ताककर देखो। उसे हिचकियाँ होने लग जायेंगी। नौ बार हिचकियाँ होने पर उससे तुम हाथ धो बैठोगे। उसे लाकर तुम मुझे सौंप दो।"

चिन के बच्चे तो पैदा हो सकते हैं, लेकिन धन के प्राप्त होने का इसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग नहीं है। यह सोचकर वह घर लौटा। उसके चार साल का लड़का खेल रहा था। चिन ने उसे अपने पास बुलाया, उसकी आँखों में देखा। चिन के लड़के को हिचकियाँ होने लगीं। पाँच बार हिचकियाँ होते ही उसके बेटे के चेहरे पर सोने का रंग चमकने लगा। चिन ने सोचा कि उसका पुत्र भी उसके लिए एक ख़जाने जैसा है। तब चिन उसकी ओर देखना बंद कर खान की ओर दौड़ पड़ा। चिन का लड़का हिचकियाँ लेना बंद कर वह फिर से खेलने लगा।

चिन को देख खान की देवी हँसकर बोली–"तुम्हें धन देने की ताक़त मुझमें होती तो क्या मैं पिंग को उसके पैर टूटने से बचा न सकती थी? किसी ने इस खान को सरकार से एक साल के लिए ठेके पर लिया था। उसने बख़्शीस के रूप में मेरे सामने यह धन की गठरी फेंक दी है। पिंग की क़िस्मत अच्छी थी, इसलिए उसे मिल गई। चिन, सुनो, तुम्हारी आँखों में ही ख़जाना भरा है। सोने जैसा तुम्हारा लड़का बुढ़ापे में तुम्हारी मदद करेगा।" यों कहकर देवी अदृश्य हो गई।

एक से बढ़कर एक

जग्गू रास्ते से गुजर रहा था। उसे एक कोयल के कूकने की आवाज़ सुनाई दी। उसने भांप लिया कि वह कूक बगल की गली के बरगद पर से आई है।

उसी वक्त कोयल को उकसाने की सनक जग्गू के सर पर सवार हो गई। फिर क्या था। वह भी कोयल की तरह कूक उठा। तब कोयल और ज़ोर से कूक उठी। जग्गू उसके साथ स्पर्धा करके और ज़ोर-शोर से कूकने लगा। आख़िर थककर वह कूकना बन्द करके आगे बढ़ा।

उस गली के नुक्कड़ पर जग्गू का दोस्त मगन दिखाई दिया। जग्गू ने अपने दोस्त को बताया कि उसने कोयल को कैसे तंग किया है! यह बात सुनकर मगन बोला-"अरे जग्गू, तुमने यह क्या किया? तुम्हारी आवाज़ को सचमुच कोयल की कूक समझ कर उस बरगद के पेड़ के यहाँ से मैं ही कूकता रहा।"

बेचारा पंडित

हारून अल रशीद जब बगदाद पर शासन करता था, उस के राज्य में एक अध्यापक रहा करता था। उस के यहाँ चौबीस विधार्थी पढ़ते थे। अध्यापक बड़ा ही निर्दयी था। शाम तक बच्चों को पाठशाला से छुट्टी न देता। सूर्यास्त के बाद भी एक घंटे तक पढ़ाता, तब उन्हें घर भेज देता। यही निर्दयता अध्यापक की कठिनाइयों का कारण बनी।

एक दिन अध्यापक अपना पाठ शुरू करने जा रहा था, तभी चौबीसों विद्यार्थी एक साथ उठ खड़े हुए और बोले— "पंडितजी! आज आपका चेहरा पीला क्यों है?"

अध्यापक ने उनकी बातों पर कोई ध्यान न दिया। क्योंकि उसकी तबीयत कोई खराब न थी, बिलकुल ठीक थी। इसलिए वह अपने वद्यार्थियों को ज़ोर से डांटकर बोला—"अरे कमबख्तों, तुम लोग अपने पाठ पढ़ लो।"

मगर विद्यार्थियों का नेता अध्यापक के नजदीक जाकर घबराये स्वर में बोला— "पंडितजी, अल्लाह की क़सम! आपका चेहरा तो एक दम पीला है। अगर आप की तबीयत ठीक न हो तो पढ़ाने का काम मैं देख लेता हूँ।"

बाकी विद्यार्थियों ने भी अपने चेहरे ऐसे बनाये जिन में यह आतुरता थी कि उन का अध्यापक ज़िंदा रहेगा या नहीं।

इस पर अध्यापक को लगा कि शायद वह सचमुच बीमार हो! लेकिन बीमारी के कारण प्रकट न हो रहे हो, ऐसी बीमारी तो खतरनाक भी हो सकती है। वह उसी वक्त उठ खड़ा हुआ, पढ़ाने की जिम्मेदारी विद्यार्थियों के नेता को सौंपकर घर चल दिया। वह बिस्तर पर लेट गया

और अपनी पत्नी से बोला–"सुनो मुझे पीलिया की बीमारी हो गई है। कोई काढ़ा बनाकर दे दो।"

थोड़ी देर बाद विद्यार्थियों का नेता अध्यापक के घर पहुँचा और चौबीस दीनार अध्यापक के हाथ देते हुए बोला–"पंडितजी, आप के शिष्यों ने आप के इलाज के लिए चन्दा वसूल करके यह रक़म दी है; ले लीजिए।"

ये बातें सुनने पर विद्यार्थियों के प्रति अध्यापक के मन में अपार वात्सल्य पैदा हुआ। पंडितजी ने विद्यार्थियों को उस दिन की छुट्टी दे दी। पर उसे पता न था कि छुट्टी के वास्ते ही विद्यार्थियों ने चन्दा वसूल किया है।

उस धन को देखने पर पंडित को बड़ी खुशी जरूर हुई, मगर उसे अपनी बीमारी की फ़िक्र सताने लगी। इसके समर्थन के रूप में दूसरे दिन सवेरे विद्यार्थियों का नेता अध्यापक के घर पहुँचकर बोला–"पंडित जी, अल्लाह आप को बचावे, आज तो आप का चेहरा कल से भी ज्यादा पीला पड़ गया है।"

पंडित ने यह बात सुनने पर अपने मन में सोचा कि अपनी बीमारी का कोई बढ़िया इलाज कराना है। इसके वास्ते बच्चों से प्राप्त वह रक़म भी ख़र्च करने का उसने निश्चय कर लिया। उसने विद्यार्थियों के नेता से कहा–"सुनो बेटा,

पाठशाला की देखरेख तुम्हें ही करनी होगी! समझें!"

एक हफ़्ता बीत गया। विद्यार्थियों का नेता चौबीस दीनारों का और चन्दा वसूल कर लाया और अध्यापक के हाथ देकर बोला–"पंडित जी! आपके इलाज के वास्ते विद्यार्थियों ने यह चन्दा वसूल किया है। आप मेहरबानी करके ले लीजिए।"

पंडितजी की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। उसे तब तक मालूम हो गया था कि उसे कोई बीमारी नहीं है। फिर भी उसे लगा कि मेहनत करके पढ़ाने के बदले बच्चों का चन्दा लेना ही ज़्यादा फ़ायदेमंद है।

जब भी विद्यार्थियों का नेता घर पहुँचता, पंडित उस से यही शिकायत करता–"बेटा, अब मुझे कोई भी खाना अच्छा नहीं लगता, बदन में भी काफ़ी कमजोरी आ गई है।"

एक दिन पंडित अण्डा उबाल कर खाने जा रहा था, तभी विद्यार्थियों का नेता उसके घर आ धमका। उसे देखते ही पंडित ने गरम-गरम अण्डे को मुँह में डाल लिया, उस का मुँह जल गया और छाले पड़ गये।

विद्यार्थी को वहाँ से भाग जाना था, मगर उसे शैतानी करने की सूझी! वह पंडित की ओर देख चिल्ला उठा–"पंडितजी, आप के गाल सूझ गये हैं। शायद कोई फोड़ा हो गया है।"

पंडित मुँह के जलने के कारण परेशान था। वह कुछ बोलने की हालत में भी न था। तभी विद्यार्थी बोला–"पंडितजी! इस फोड़े को फोड़ देना है।" यह कहते सूआ लेकर वह पंडित के निकट पहुँचा।

पंडित झट से उठ खड़ा हुआ; तुरंत वह रसोई घर में भाग गया और अण्डे को थूक दिया। लेकिन तब तक सारा मुँह जल गया था। छाले पड़ कर फ़ोड़े जैसे बन गया था। इसके बाद उसे नाई को बुलवा कर इलाज कराना पड़ा।

सच्चा चोर

गरुड़ राज्य संपन्न था। वहाँ की प्रजा सुखी थी। लेकिन एक बार उस राज्य में एक डाकू आ घुसा। वह बराबर डाके डालने लगा। उसको पकड़ने के राजा ने कई प्रयत्न किये, लेकिन कोई सफलता न मिली।

उस डाकू का नाम गर्जसिंह था। राजा ने ढिंढोरा पिटवाया कि डाकू गर्जसिंह का पता बतानेवाले को भारी इनाम दिया जाएगा। लेकिन कोई भी डाकू का पता बता न पाया। उस हालत में मंत्री रामवर्मा ने राजा को वचन दिया कि वह दो दिन में डाकू को पकड़कर सौंप देगा। राजा को इस बात का आश्चर्य हुआ कि जब कई हज़ार सिपाही और देश के लोग भी पूरी कोशिश करके उस डाकू को पकड़ न पाये, उसे मंत्री अकेले दो दिनों में कैसे पकड़ सकता है।

दो दिन बीत गये। दूसरे दिन रात को मंत्री तथा चार और व्यक्ति एक बलवान आदमी को बन्दी बनाकर ले आये और राजा के सामने हाज़िर किया।

राजा ने मंत्री से पूछा—"यह कौन है?"

"महाराज! यही डाकू गर्जसिंह है। इसकी हिम्मत और घमण्ड को देखने पर आश्चर्य होता है। यह मेरे घर डाका डालने आया और पकड़ा गया। इसे सवेरे तक राजमहल में ही बन्दी बनाकर रखिये। कल खुले आम इसका फ़ैसला कर लेंगे।" मंत्री बोला।

दूसरे दिन सवेरे डाकू गर्जसिंह के पकड़े जाने की खबर दावानल की भांति सारे देश में फैल गई। उसका फ़ैसला सुनने के लिए लोग दूर-दूर से आ पहुँचे।

फ़ैसला करने में कोई देर न लगी। राजा के पूछने पर गर्जसिंह ने मान लिया

सत्यनारायण सिंह

कि वही नामी डाकू गर्जसिंह है और उसने इस राज्य में कई चोरियाँ की हैं।

राजा ने वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों से पूछा—"बोलो, इस बदमाश को कैसी सजा दी जाय?"

इस पर कुछ लोगों ने बताया कि उस दुष्ट का सिर काटकर फेंक देना चाहिए। कुछ लोगों ने कहा कि उसे फांसी पर लटकाया जाना चाहिए। इस तरह सबने अपने अपने ढंग से डाकू को सजा देने की बात बताई।

अंत में मंत्री रामवर्मा ने राजा को सुझाया—"महाराज! इस डाकू के जरिये हमारी बड़ी हानि हो गई है। इसको मार डालने से हमारा कोई बड़ा लाभ भी होनेवाला नहीं है। इसके जरिये अगर हम को फ़ायदा उठाना है तो अच्छा उपाय यही है कि इसको देश निकाले की सजा दी जाय! ऐसा करने पर यह हमारे पड़ोसी देशों में जाकर वहाँ लूट-खसोट करके अराजकता पैदा करेगा। इससे हमारा बड़ा लाभ हो सकता है।" यों मंत्री ने राजनैतिक दृष्टि से सलाह दी।

राजा को भी यह सलाह पसंद आ गई। उसी वक़्त डाकू को बंधनों से मुक्त करके राजा ने उसे देश छोड़कर जाने का आदेश दिया।

डाकू गर्जसिंह वहाँ से चल पड़ा। वह राज्य की सीमा पर जब एक निर्जन प्रदेश में पहुँचा तब एक युवक उसके सामने आया। उसने पूछा—"तुम कौन हो?"

"मैं गर्जसिंह हूँ।" गर्जसिंह ने कहा।

"तुम झूठ बोलते हो! डाकू गर्जसिंह मैं हूँ? तुम अपना नाम बदलकर इस तरह मुसीबत में क्यों फँस गये हो?" उस युवक ने पूछा।

तुरंत गर्जसिंह का अभिनय करनेवाले मंत्री के पुत्र ने डाकू को कसकर पकड़ लिया। उसके पीछे वेष बदलकर चले आनेवाले सैनिकों ने डाकू के हाथ-पैर रस्सों से बांध दिये। मंत्री की युक्ति के कारण चोर पकड़ा गया।

अनोखा इलाज

एक गाँव में दीपचन्द नामक एक किसान था। उसके यहाँ जमीन-जायदाद की कोई कमी न थी, लेकिन वह बड़ा ही किफ़ायती था। जब उसके दोनों बेटे बड़े हुए, तब दीपचन्द ने दोनों की शादियाँ कीं और खेती की जिम्मेदारी उन्हें सौंप दी।

थोड़े दिन बाद दोनों बहुएँ घर आईं, मगर अपने ससुर से उनकी पटती न थी। क्यों कि वह उनसे हर पैसे का हिसाब माँगता था। खाने-पीने में ज़्यादा खर्च करने नहीं देता था। बेटे भी फ़सल पैदा कर सारी आमदनी अपने पिता के हाथ सौंप देते थे।

एक बार दीपचन्द बीमार पड़ा। बेटों ने वैद्य को बुलाकर इलाज कराना चाहा। मगर बूढ़े ने नहीं माना। उसने कहा—"बेटे, यह बीमारी अपने आप ठीक हो जाएगी। तुम लोग नाहक़ क्यों खर्च करना चाहते हो?" लेंकिन दिन ब दिन बीमारी बढ़ती गई और आखिर उसकी बोली बंद हो गई। तब भी बेटों ने वैद्य को बुलाकर इलाज कराना चाहा, मगर बूढे ने हाथ का इशारा करके मना किया।

अब दीपचन्द की बहुओं को आजादी मिल गई। उनकी प्रेरणा से दोनों भाइयों ने अपनी जमीन-जायदाद बांट ली।

एक दिन बड़े बेटे ने दीपचन्द के कमरे में पहुँचकर कहा—"बाबूजी, यह कमरा मेरे हिस्से में आया है। इस की मरम्मत करवानी है। फिलहाल आप मवेशीखाने में लेट जाइये।" यों समझाकर अपने पिता को मवेशीखाने में पहुँचा दिया।

इसके बाद दीपचन्द का जीवन बड़ा ही दूभर हो गया। बेटे और बहुएँ भी अब बिलकुल उस की परवाह न करती थीं। वक़्त पर खाना न मिलने और दवा-दारू न

गोकुल पांडे

करने की वजह से दीपचन्द के हाथ-पैर भी एक दम ढीले पड़ गये ।

एक दिन बड़े बेटे ने मवेशीखाने में पहुँचकर अपने पिता की हालत देखी, उसे बड़ा आश्चर्य हुआ । दीपचन्द कुछ कहने की कोशिश कर रहा था, उसकी आँखों में कोई कामना झलक रही थी ।

बड़े बेटे ने छोटे को बुला भेजा । इसके बाद दोनों बहुएँ भी वहाँ पर पहुँचीं । गाँव के लोग उसे देखने जमा हो गये । पर किसी की समझ में न आया कि दीपचन्द क्या कहना चाहता है ।

आखिर सब ने सोचा कि दीपचन्द ने काफ़ी धन जमा कर कहीं छिपा कर रखा होगा । उसका रहस्य अपने बेटों को बताने को वह छटपटा रहा है । लेकिन अच्छा इलाज करा कर उसकी बोली खुलने पर वह रहस्य प्रकट हो सकता है।

इसके बाद दोनों बेटे दीपचन्द को शहर ले गये । वहाँ के मशहूर वैद्यों से इलाज कराया । पैसे के खर्च होते देख दीपचन्द परेशान था । मगर बेटों ने बड़ी लगन के साथ अपने बाप का इलाज कराया । दीपचन्द कुछ ही दिनों में बोलने लग गया ।

घर लौटने पर बेटे और बहुओं ने दीपचन्द को घेर कर पूछा–"बबूजी, आपने धन कहाँ छिपाया है ?"

दीपचन्द ने अचरज में आकर कहा– "मैंने तो कहीं धन छिपाया नहीं ।"

"तो आप उस दिन हम से कुछ बताने को छटापटा रहे थे न ?" बेटों ने पूछा ।

दीपचन्द थोड़ी देर सोचकर बोला– "ओह, यह बात है ? गाय का बछड़ा झाड़ू को चबा रहा था । नाहक़ झाड़ू नष्ट हो जाएगा । इतने में बड़ा बेटा वहाँ आया । मैं ने उससे यह बात कही । लेकिन वह समझ न पाया । मैं ने सोचा कि कम से कम तुम लोग समझ पाओगे, मगर तुम लोग भी समझ न पाये ।" यों कह कर उसने गहरी साँस ली ।

दीपचन्द के बेटे और बहुएँ यह बात सुन कर आवाक् रह गयीं ।

वर की योग्यता

पुराने जमाने में काशी नगर में विश्वनाथ नामक एक गरीब ब्राह्मण था। वह याचना करके अपना पेट पालता था। विश्वनाथ के मनोज्ञा नायक एक सुंदर कन्या थी। उसे वह बड़े ही लाड़-प्यार से पालता था।

मनोज्ञा अब विवाह के योग्य हो चुकी थी। गरीब ब्राह्मण की कन्या का विवाह का होना साधारण बात न थी। किसी ऐरे-गैरे के साथ मनोज्ञा की शादी करना विश्वनाथ को पसंद न था।

इन्हीं दिनों में काशी नगर में ढ़िंढोरा पीटा गया–"अमुक राजशेखर के पुत्र के लिए एक वधू की जरूरत है। सुंदर और सुशील कन्याओं के पिता सराय के पास जाकर राजनाथ से मिल सकते हैं। वर बिना सहारे के खड़ा नहीं हो सकता। वह हमेशा अन्य मनस्क रहता है। दो-चार लोगों से सलाह लेकर ही वह कोई भी कार्य करता है। सर उठाने लायक़ भारी आमदनी है। मेघ जैसे गुणवाला है।"

यह ढिंढोरा सुन कर विश्वनाथ हंस पड़ा। उसने सोचा कि वर लंगड़ा होगा, बुद्धिहीन होगा। ठोकरी ढोने वाला होगा, मेघ जैसे पल भर में बदल कर आखिर पानी पानी होने वाला होगा। ऐसे अयोग्य के साथ अपनी लड़की ब्याहनेवाला कैसे नालायक़ होगा।

यह ढिंढोरा मनोज्ञा ने भी सुन लिया। उसने अपने पिता से पूछा–"पिताजी, क्या हम भी सराय के पास चले?"

"नहीं बेटी! क्या तुम ऐसें वर के साथ शादी करोगी?" पिता ने पूछा।

मगर मनोज्ञा ने सराय के पास जाने का हठ किया। उसकी बुद्धिमत्ता पर विश्वनाथ का अपार विश्वास था, इसलिए उसने

कमला भार्गव

मान लिया। इसके बाद वे दोनों सराय के पास पहुँचे। मनोज्ञा ने राजनाथ को प्रणाम करके कहा—"महाशय, मैं आप के पुत्र के साथ शादी करने को तैयार हूँ।"

"बेटी, तुमने मेरे पुत्र के सारे लक्षण सुन लिये हैं; अपने पुत्र के प्रति अपार प्रेम के कारण मैं उस का विवाह करना चाहता हूँ। बस, तुम सोच-समझ कर तब निर्णय कर लो।" राजनाथ ने समझाया।

मनोज्ञा ने मुस्कुरा कर कहा—"महाशय, इस में सोचने की क्या बात है? आप के पुत्र के साथ इसके पूर्व ही एक ने विवाह कर लिया है। इसलिए मुझे कैसे आपत्ति हो सकती है?" ये बातें सुन राजनाथ का चेहरा खिल उठा। उसने हँस कर कहा—"अच्छी बात है, बेटी! मैं तुमको अपनी बहू बना लेता हूँ।"

इसके बाद राजनाथ ने विश्वनाथ के घर का पता और अन्य विवरण जान कर उन्हें भेज दिया।

घर लौटते वक़्त विश्वनाथ ने पूछा—"बेटी! तुम्हारे लिए एक सौत भी है?"

"पिताजी, जानते हैं कि वह वर कौन हैं? वे तो काशी के राजा हैं। राजा तो धर्म के बिना खड़ा नहीं हो सकता। हमेशा दूसरों के बारे में विचार किया करते हैं। मंत्रियों की सलाह लिये बिना कोई काम नहीं करते। सिर पर किरीट के बोझ के कारण जो आमदनी होती है, वह मेघ जैसे समुद्र से नमकीले पानी को ग्रहण कर प्रजा को मीठे जल देने वाले जैसे गुण वाले हैं।" मनोज्ञा ने समझाया।

"तब तो उनकी पहली पत्नी कौन है?" विश्वनाथ ने पूछा।

"और कौन है? भूदेवी हैं!" मनोज्ञा ने कहा। शीघ्र ही यह साबित हुआ कि उसकी कल्पना सही है। मनोज्ञा के वास्ते राज महल से सोने की पालकी आ पहुँची। इसके थोड़े दिन बाद ही काशी के राजकुमार के साथ मनोज्ञा का वैभवपूर्वक विवाह संपन्न हुआ।
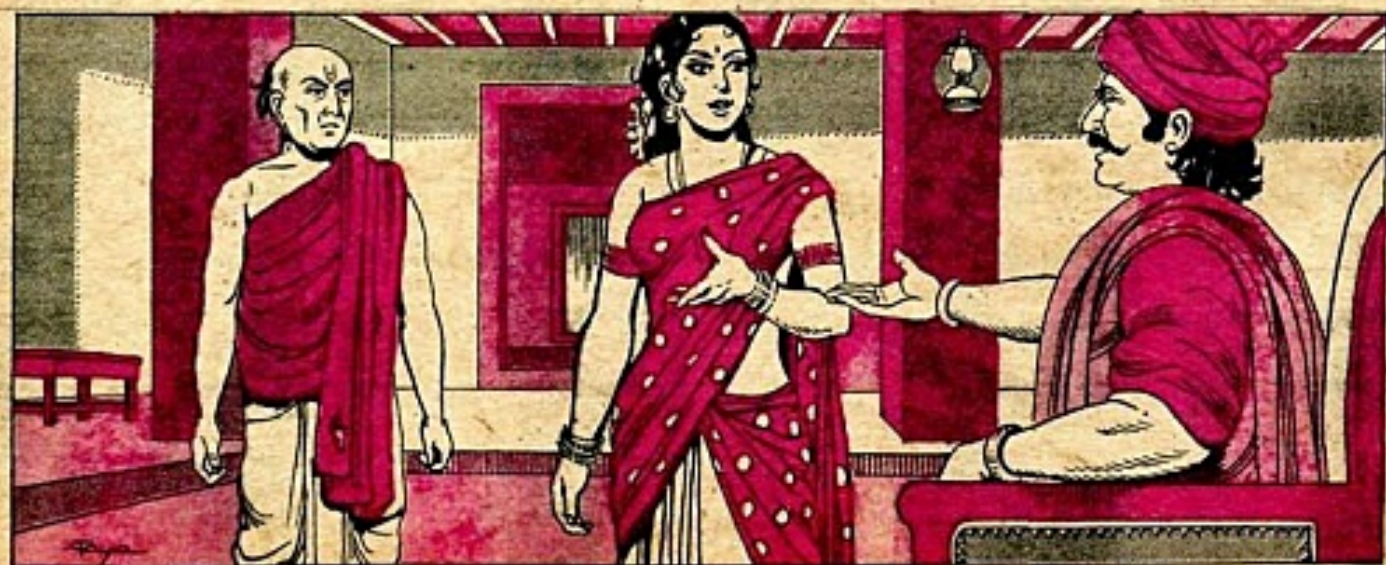
कर्तव्य का पालन

रामशास्त्री नगर का एक प्रसिद्ध वैद्य था। वह नगर एक नदी के किनारे बसा था। बारह साल में पड़नेवाला नदी का मेला लगा। उस अवसर पर एक दिन शाम को रामशास्त्री के बचपन के मित्र श्रीहरि और विट्ठल आ पहुँचे। श्रीहरि एक पाठशाला का अध्यापक था। विट्ठल एक गाँव का न्यायाधिकारी था।

रामशास्त्री ने अपने शहर के सभी मंदिर अपने मित्रों को दिखाये, संध्या के समय घर लौटा। अपनी पत्नी को बताया कि वह अतिथियों के लिए भी खाना बनावे। तब आंगन में बैठकर अपने मित्रों के साथ गपशप करने लग गया। उसने अपने कर्तव्य के पालन में एक बार अन्यायपूर्वक व्यवहार किया था। यह घटना उसने अपने मित्रों को यों सुनाई :

एक गाँव में एक धनवान हर महीने बड़ी दावत देता और उसमें केवल संपन्न परिवार के लोगों को न्योता देता था। एक बार रामशास्त्री को भी न्योता मिला। रामशास्त्री यह सोचकर बड़ा प्रसन्न हुआ कि गाँव के संपन्न लोगों की सूची में उसका भी नाम चढ़ गया है, इसलिए बड़े लोगों का परिचय प्राप्त कर वह अपने पेशे की तरक्की कर सकता है।

उसके पास जो कुछ बढ़िया वस्त्र थे, धारण कर दावत के लिए निकलने ही जा रहा था, तभी एक गरीब औरत रोते उसके घर पहुँची। उसके पैरों पर गिरकर गिड़ गिड़ाकर बोली–"वैद्यजी, दस बच्चों की जिम्मेदारी रखनेवाला मेरा मर्द अचानक बेहोश होकर गिर पड़ा है। आप ही उन्हें बचा सकते हैं।"

मगर रामशास्त्री का मन दावत पर लगा था। अलावा इसके उस गरीब

प्रभाकर द्विवेदी

औरत के पति का इलाज करने पर उसके हाथ कुछ लगनेवाला भी नहीं है। इसलिए वह यह कहकर चला गया—"मैं जल्दी के काम पर जा रहा हूँ, मेरे पास अब फ़ुरसत नहीं है।" लेकिन किसी अवांछित घटना के कारण उस दिन दावत टल गई। रामशास्त्री घर लौटा। उस गरीब औरत के घर का पता लगाकर वहाँ पहुँचा, लेकिन समय पर इलाज न होने के कारण उस औरत का पति मर चुका था।

इस एक मौक़े को छोड़ मैंने अपने कर्तव्य के पालन में कभी असावधानी नहीं की है।" रामशास्त्री ने समझाया।

"तुम्हारे जैसे मैंने भी एक बार अपने कर्तव्य का अतिक्रमण किया है।" इन शब्दों के साथ शिक्षक श्रीहरि ने अपनी घटना यों सुनाई: वह एक जमीन्दार की पाठशाला में अध्यापक है। उसमें जमीन्दार का पुत्र भी पढ़ा करता था। लेकिन वह पाठशाला उन्हीं लोगों की थी, इसलिए पढ़ाई के प्रति असावधानी दिखाते हुए भी वह विद्यार्थियों में प्रथम निकलता था। उस पाठशाला में एक किसान का लड़का भी भर्ती हुआ। वह पढ़ने में बड़ा तेज था। वह हर विषय में जमीन्दार के पुत्र से कहीं आगे था।

इस कारण जमीन्दार के पुत्र ने किसान के लड़के को पाठशाला से निकालने को श्रीहरि से कहा। उसकी इच्छा की पूर्ति न करने से कहीं श्रीहरि की नौकरी ही

छूट जाय, इस डर से श्रीहरि ने किसान के लड़के से ऐसे सवाल पूछे, जो पढ़ाये नहीं गये थे। किसान का लड़का उन सवालों का जवाब न दे पाया, इसलिए श्रीहरि ने नाराज़ होकर किसान के लड़के को पाठशाला से निकाल दिया।

किसान जानता था कि उसके लड़के के प्रति अन्याय हो गया है, फिर भी वह जमीन्दार से डरकर चुप कर गया। इस प्रकार पढ़-लिखकर योग्य बन सकनेवाला किसान का लड़का अपने पिता के साथ खेत के काम में लग गया।

"मैं भी तुम्हारे जैसे एक बार अपने कर्तव्य का पालन न कर पाया।" इन शब्दों के साथ विट्ठल यों सुनाने लगा:

एक बार उस की कचहरी में एक फ़रियाद आई। एक बड़े व्यापारी ने अपनी जमीन में एक बड़ा महल बनवाया। उसकी जमीन से लग कर एक किसान की झोंपड़ी और उसकी खाली जमीन भी थी। व्यापारी ने वह जमीन खरीदने की कोशिश की, मगर किसान अपनी जमीन व्यापारी को बेचने को तैयार न हुआ। व्यापारी ने अपने अनुचरों के द्वारा किसान की झोंपड़ी गिराकर उस स्थान पर क़ब्ज़ा कर लिया।

विट्ठल वास्तविक समाचार जानता था। लेकिन उस वक़्त व्यापारी के साथ विट्ठल की बहन की शादी की बातें चल रही थीं। व्यापारी तो बड़ा प्रभावशाली था। इसलिए विट्ठल ने व्यापारी के पक्ष में
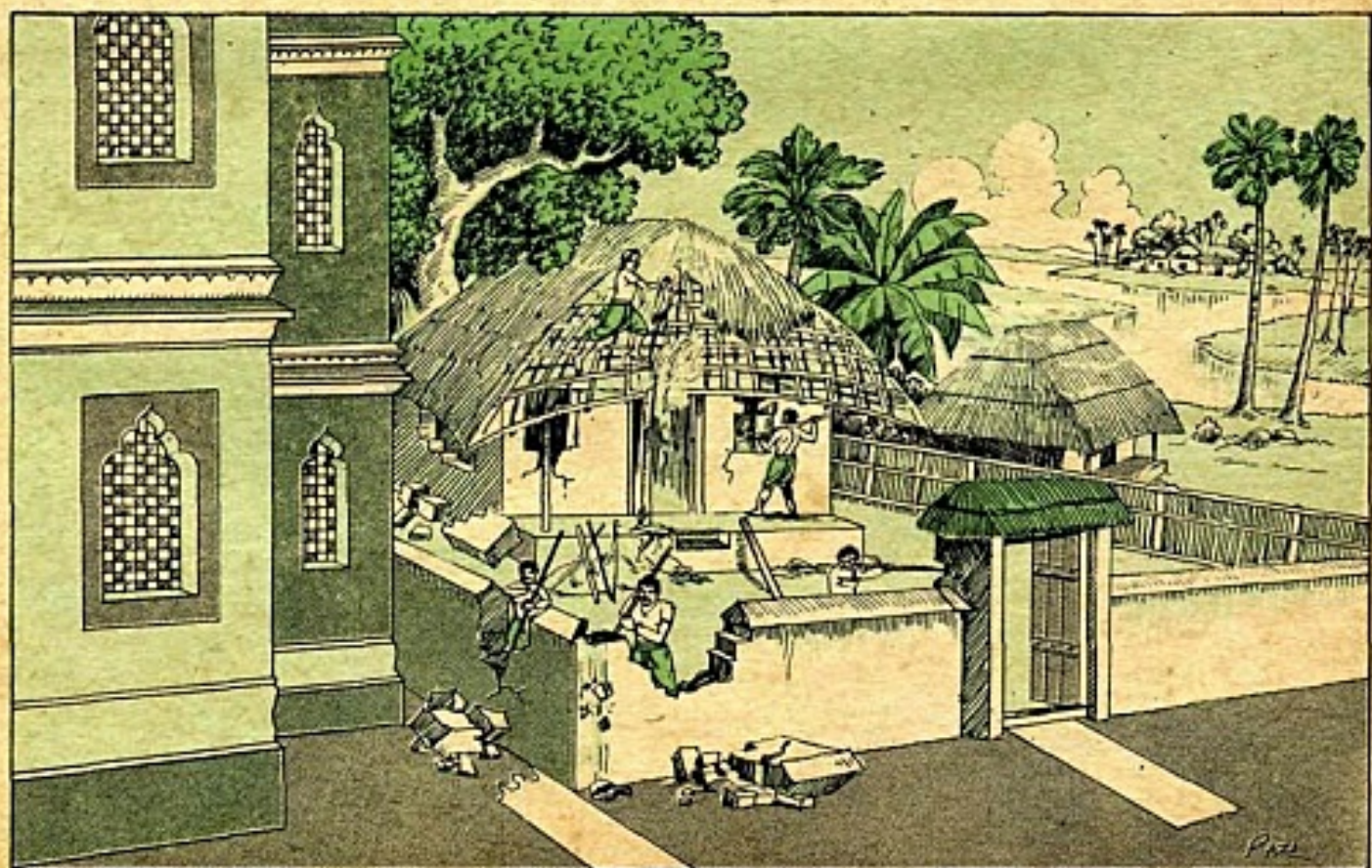
फ़ैसला सुनाया था। "मैंने अपने पेशे में यही एक अन्याय किया है।" विट्ठल ने कहा।

इसके बाद रामशास्त्री बोला—"कुल मिलाकर हम सब अपने कर्तव्य सही ढंग से पूरा कर रहे हैं; अब उठिये, भोजन करेंगे।" यों कहकर रामशास्त्री उठा, रसोई घर में पहुँचकर चकित रह गया। उसकी पत्नी रसोई बनाने की तैयारी में न थी। वह किवाड़ की ओट में बैठकर उन मित्रों का वार्तालाप सुन रही थी।

"क्या बात है! क्या रसोई नहीं बनाई?" रामशास्त्री ने अपनी पत्नी से पूछा।

"नहीं, न मालूम क्यों आज मेरे बदन में दर्द हो रहा है।" रामशास्त्री के क्रोध का पारा चढ़ गया। कई दिन बाद अपने घर आये मित्रों को क्या उपवास करना पडेगा? इसलिए क्रोध में आकर रामशास्त्री अपनी पत्नी पर हाथ चलाने को हुआ।

"ठहर जाइये! मैं ने एक बार केवल अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया, इसी के वास्ते आप मुझे पीटने जा रहे हैं? एक वक़्त खाना न खाया तो कौन सा बड़ा भारी नुक़सान हुआ? कोई मर तो नहीं जाएगा न? लेकिन वैद्य अगर अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते हैं तो एक आदमी के प्राण ही निकल जाते हैं। अध्यापक अपने विद्यार्थी के प्रति अन्याय पूर्वक व्यवहार करते हैं तो उस की सारी ज़िंदगी ही बरबाद हो जाती है। न्यायाधिकारी यदि अन्याय पूर्वक व्यवहार करते हैं तो एक व्यक्ति अकारण दण्ड का पात्र बन जाता है। ये पेशे करनेवाले अगर एक बार भी अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते हैं, तो उन्हें क्षमा नहीं करनी चाहिए! आप तीनों सबसे पहले इस बात को अच्छी तरह समझ लीजिए! आप लोग जब मंदिर देखने बाहर गये थे। तभी मैंने रसोई बनाकर रखी है। अब चलिये, हाथ-मुँह धो लीजिए। मैं अभी खाना परोसती हूँ।" रामशास्त्री की पत्नी ने उलहाना भरे शब्दों में समझाया।

अंजनादेवी का आतिथ्य पाकर रामचन्द्रजी के साथ आये हुए सभी लोग अयोध्या के लिए चल पड़े। रास्ते में सीताजी ने यशोधरा से कहा–"देखा है न, मैंने पहले ही बताया था कि तुम्हारे पति की कोई हानि न होगी! हनुमान की शरण में जाकर ययाति चरितार्थ हो गये हैं।"

इस पर यशोधरा ने सीताजी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा–"माताजी, यह सब आप श्रीसीता-रामचन्द्रजी का अनुग्रह ही है। हनुमान के हृदय में रामचन्द्रजी के साथ आप भी हम सब को दिखाई दीं। हमारे नेत्र धन्य हो गये हैं।"

"हाँ, हाँ, सीता माईजी! हमने भी देखा है! वाह, उस वक़्त कैसा अद्भुत था!" चन्द्रांगद और चन्द्रमुखी खुशी में आकर तालियाँ बजाते एक साथ बोल उठे। यशोधरा ने उन्हें रोका, पर सीताजी को उन बच्चों की ओर वात्सल्य भाव से देखते भांपकर बोली–"माई, आप शीघ्र ही संतान प्राप्त करेंगी। आप के चेहरे पर मातृत्व की दिव्य कांति झलक रही है।"

सीताजी लज्जित हो मुस्कुराते हुए यशोधरा से बोलीं–"तुम उम्र में मुझ से छोटी दिखाई देती हो, पर ऐसे रत्न जैसे बच्चों का जन्म देकर तुम मुझसे बड़ी हो गई हो! तुम अत्यंत भाग्यशालिनी हो! मैं तुम्हारे शब्दों को आशीर्वाद मानती हूँ।"

इस प्रकार पालकी में वार्तालाप करते वे अयोध्या पहुँच गईं। ययाति सपरिवार

४२. अश्वमेध याग

रामचन्द्रजी का अतिथि बनकर रहा । यह सब सीताजी के अनुरोध पर हुआ था । कुछ दिन इसी प्रकार सीताजी यशोधरा के साथ प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप करते बच्चों के खेल व गीतों को देख-सुनकर आनंद पूर्वक अपना समय बिताती रही ।

थोड़े दिन बाद ययाति रामचन्द्रजी तथा सीताजी से अनुमति लेकर अपनी पत्नी व बच्चों के साथ अपने राज्य को लौट गया ।

एक बार रामचन्द्रजी सीताजी के साथ पूर्णिमा के दिन संध्या के समय राजोद्यान में विहार कर रहे थे । उस वक़्त चन्द्रोदय हो रहा था । रामचन्द्रजी ने चन्द्रमा को दिखाते हुए कहा–"जानकी, उधर देखो तो सही!"

सीताजी बोलीं–"जी हां! पूर्वी दिशा नामक कौसल्या देवी के गर्भ से राजचन्द्रजी का उदय हो रहा है ।"

"नहीं, सीता देवी के गर्भ से ऐसा ही चन्द्रोदय होनेवाला है । यही ज्योतिष की बात पूर्वी दिशा बता रही है ।" रामचन्द्रजी ने कहा ।

"पूर्वी दिशा यह भी बता रही है न कि वह चन्द्र रामचन्द्रजी जैसे ही होगा ?" सीताजी ने कहा ।

"नहीं, वह चन्द्र जानकी की आकृति का होगा ।" रामचन्द्र ने कहा ।

इस पर वे दोनों प्रसन्नतापूर्वक हंस पड़े । वे जिस चन्द्र शिला पर बैठे थे, उसके समीप में स्थित एक तड़ाग में दो जोड़े कुमुद खिल रहे थे । उनकी ओर बार बार दृष्टि प्रसारित करते सीताजी रामचन्द्रजी के साथ अंत:पुर में चली गईं ।

थोड़ी रात बीतने पर सीताजी अपने कक्ष से बाहर आईं, महल पर से उद्यान की ओर दष्टि डाली । निकट के तड़ाग में चांदनी झिलमिला रही थी । दो सफ़ेद कुमुद नक्षत्रों की भांति चमक रहे थे ।

उधर गंधमादन पर्वत पर हनुमान जप और तप में निमग्न था । उसे पता न

चला कि काल प्रवाह में न मालूम कितने वर्ष बीत गये। एक दिन अयोध्या से रामचन्द्रजी का भद्र नामक अंतरंगी आ पहुँचा और हनुमान से बोला—"हनुमानजी, आप को रामचन्द्रजी बुला रहे हैं।"

भद्र अत्यंत उदास था। इस पर हनुमान ने पूछा—"बताइये, क्या हुआ है? अयोध्या में कोई विशेष समाचार तो नहीं?"

भद्र ने गहरी साँस लेकर कहा—"जो कुछ होना था, सो हो गया।"

"आप यह क्या कह रहे हैं? सविस्तार बताइये।" हनुमान ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"मैं संक्षेप में सुनाता हूँ, सुनिये।" इन शब्दों के साथ भद्र ने यों सुनाया:

एक दिन ऋषियों को साथ ले ब्राह्मणों का एक दल रामचन्द्रजी के पास पहुँचा। उन लोगों ने बताया—शंबूक नामक एक शूद्र वेदाध्ययन करके तपस्या करने के कारण धर्म की हानि हुई है। इस कारण एक ब्राह्मण बालक की अकाल मृत्यु हो गई है। इसलिए तत्काल रामचन्द्रजी को जाकर शंबूक का वध करना होगा।

रामचन्द्रजी ने यह प्रतिज्ञा की थी कि वे सभी वर्गों के लोगों को संतुष्ट करते हुए राज्य करेंगे। इस कारण रामचन्द्रजी ने जाकर शीर्षासन लगाये तप करनेवाले शंबूक का सर काट डाला। इस पर शंबूक की पत्नी कपिला ने यह चेतावनी दे प्राण त्याग दिये—"हे राजन, आप पर कोई भयंकर विपत्ति आनेवाली है। उसकी सूचना के रूप में आपने यह दारुण कृत्य किया है।"
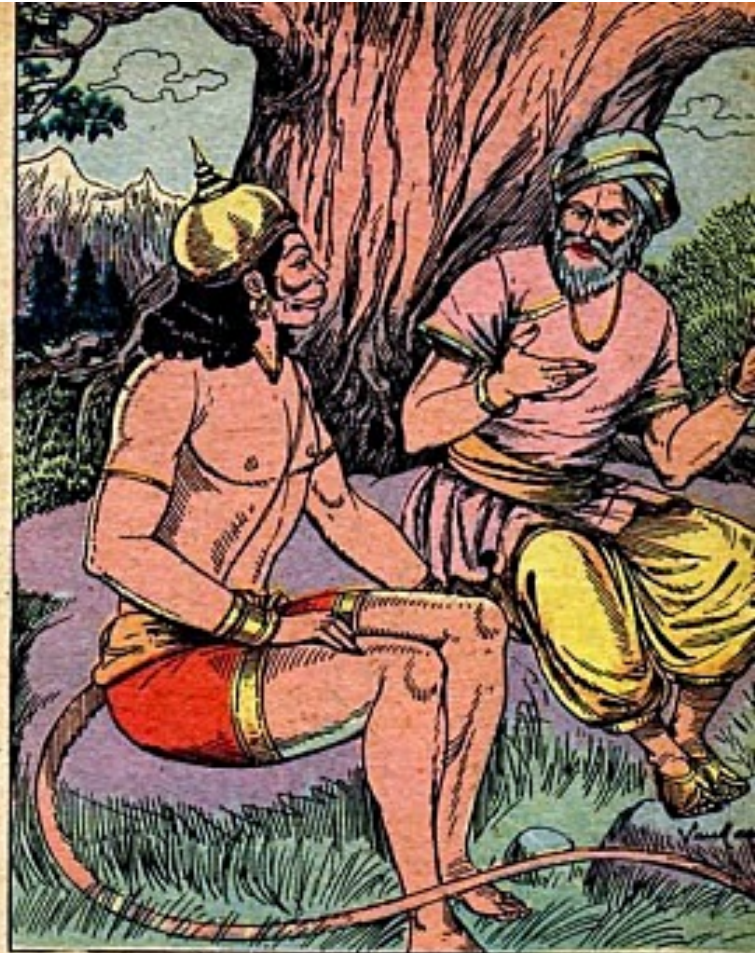
इस घटना के थोड़े दिन बाद एक दिन रात को श्रीरामचन्द्रजी मुझे साथ लेकर वेष बदले नगर भ्रमण करते धोबियों की बस्ती में पहुँचे। वहाँ पर पति-पत्नी किसी बात को लेकर झगड़ रहे थे।

एक धोबी की पत्नी घर से थोड़े दिन बाहर रहकर लौट आई थी, इस पर धोबी ने धोबिन को खूब पीटा और उसे घर के अन्दर आने नहीं दिया। खून से लतपथ अपनी पीठ दिखाते धोबिन दहाड़ें मारकर

रो रही थी। वह चिल्लाते जाती थी– "रामचन्द्रजी जैसे महाराजा सीताजी को फिर से अपने महल में ले आये, तुम क्या उनसे भी बड़े मर्द हो?"

इस पर नशे में चूर धोबी लोटते हुए गरजकर कहा था–"रामचन्द्रजी ने यह सोचा होगा कि मैं राजा हूँ, मुझसे पूछने की हिम्मत रखनेवाला कौन है? इसीलिए कई साल तक लंका में पराये पुरुष के पास रहने वाली सीताजी को अपने महल में ले आये; ऐसे पागल रामचन्द्रजी मैं नहीं हूँ।"

ये बातें सुन रामचन्द्रजी ने लक्ष्मण को आदेश दिया कि सीताजी को जंगल में छोड़ आवे। उस समय सीताजी पूर्ण गर्भवती थीं। इसके पहले दिन सीताजी ने कहा था–'मैं मुनियों के आश्रमों में जाकर मुनिपत्नियों के साथ थोड़ा समय बिताना चाहती हूँ,' इस बहाने पर लक्ष्मण सीताजी को रथ पर ले जाकर जंगल मे छोड़ आये हैं।

सीताजी को त्याग कर रामचन्द्रजी ने निद्राहार त्याग दिया। वे दिन ब दिन दुबले-पतले होने लगे। मुझ से रामचन्द्रजी की हालत देखी न गई। मैंने रामचन्द्रजी को बचपन में अपने कंधे पर बिठा कर मना लिया था, खिलाया भी था। एक बार बालक राम ने चन्दामामा को ला देने का हठ किया, तब मैंने आईने में चन्दामामा को दिखलाया था। अपने प्रतिबिंब के साथ चन्द्रमा को भी आईने में देख रामचन्द्रजी प्यार से कह उठे थे-यह देखो–'राम-चन्द्र!' तब मैंने रामचन्द्रजी के साथ अपना चेहरा निकट ले जाकर पूछा था–'तो फिर अब क्या दीख रहा है?' रामचन्द्र बड़ी मीठी वाणी में बोले थे–'राम-भद्र!' उस दिन से श्रीराम केलिए रामचन्द्र और भद्र का नाम रामभद्र हो गये। रामचन्द्रजी के साथ ऐसा अनोखा संबंध रखनेवाले मुझ को लगा कि उस धोबी को पकड़ कर हड्डी-पसली तोड़ मार डालना चाहिए! मैंने धोबियों की बस्ती में जाकर

दरियाफ़्त किया। वहाँ के लोगों ने मुझे बताया–"धोबी को वहाँ के लोग मारने दौड़े, पर वह बचकर भाग गया। उसकी औरत भी दिखाई नहीं दी।"

लक्ष्मण के चले जाने पर सीताजी पहाड़ी शिला पर से नदी के प्रवाह में कूदकर प्राण देने को तैयार हो गईं, तब महामुनि वाल्मीकि सीताजी को रोककर अपने आश्रम में ले गये। सीताजी ने आश्रम में जुड़वें बालकों का जन्म दिया। वाल्मीकि ने कुश और लव उनका नाम करण किया और उन्हें पढ़ाया-लिखाया। अपने द्वारा रचित रामायण का पाठ करना भी उन्हें सिखाया। सीताजी ने उन्हें धनुर्विद्या सिखाई। एक दिन कुश-लव इस ख़्याल से रामकथा का गान करते अयोध्या की ओर चल पड़े कि देखें, रामचन्द्रजी कैसे होते हैं और अपनी ही माता के नामवाली सीताज़ी कैसी हैं?

वसिष्ठ आदि ने सोचा कि रामचन्द्रजी के द्वारा सीताजी को भुलाने के लिए रघुवंशी राजाओं के किये अनुसार जगत के कल्याण के हेतु अश्वमेध याग कराना चाहिए। सबने मंत्रणा करके रामचन्द्रजी को यज्ञ संपन्न करने का आदेश दिया। सोने से निर्मित सीताजी की मूर्ति को अपने पार्श्व में रख कर रामचन्द्रजी ने अश्वमेध

याग प्रारंभ किया। उसी दिन अपने को मुनि बालक कहते लव-कुश रामायण का गान करते अयोध्या के मार्गों पर घूमते चले आ रहे थे। इस पर लक्ष्मण ने उन्हें देखा। भांप लिया कि वे कौन हो सकते हैं, तब उन्हें राज महल में ले गये।

राजमहल में कुश-लवों ने सीताजी के अग्नि-प्रवेश की घटना को गान करके सुनाया। वहाँ पर उपस्थित कौसल्या आदि अंत:पुर की नारियों, यज्ञ करानेवाले बुज़ुर्गों तथा नगर के प्रमुखों ने आँसू बहाते हुए सीताजी की स्वर्णमूर्ति के सामने हाथ जोड़ कर अपनी आँखों से लगाया। रामचन्द्रजी ने उन्हें सचमुच मुनि बालक

बेहोश हो गये। इस पर रामचन्द्रजी ने जाकर उन बालकों के साथ युद्ध किया।

कुश-लव ने यह प्रतिज्ञा करके कि उनकी माता महान पतिव्रता और साध्वी हैं, रामचन्द्रजी पर बाण छोड़े, उन बाणों के लगते ही रामचन्द्र जी बेहोश हो गये। इस पर सीताजी ने वहाँ प्रवेश किया। रामचन्द्र जी के चरण छूकर उन्हें होश में लाई।

वाल्मीकि ने रामचन्द्रजी को समझाया कि सीताजी अत्यंत पवित्र हैं, इसलिए उन्हें अयोध्या में ले जावे, इस पर रामचन्द्रजी ने सुझाया कि सीताजी इस प्रकार शपथ करके अयोध्या के निवासियों को संतुष्ट करें, तो उत्तम होगा।

इसके बाद सीताजी अपने पुत्रों के साथ अयोध्या पहुँचीं, अपने पुत्रों को रामचन्द्रजी के हाथ सौंप कर बोलीं–"मेरी पवित्रता के प्रमाण स्वरूप भूदेवी मुझे स्वीकार करें।" सीताजी के मुँह से ये शब्द निकलते ही सारी पृथ्वी कांप उठी। चतुर्दिक अंधेरा फैल गया। बिजली चमकी, मेघ गरज उठे। अयोध्या के निवासी कोलाहल ध्वनि के साथ घरों से बाहर निकल आये और सीताजी के समीप इकट्ठे हो गये। सीताजी जहाँ खड़ी थीं, उस जगह पृथ्वी फट गई। उस में से मणिमय सिंहासन

ही माना, और अनिर्वचनीय आनंद से प्रेरित होकर उन्हें अपनी गोद में लेकर चूम लिया, असंख्य उपहार देकर भेज दिया।

यज्ञ की प्रारंभिक क्रियाओं के समाप्त होने पर रघुवंश की सूर्य पताका से अलंकृत यज्ञाश्व को स्वेच्छापूर्वक विहार करने केलिए छोड़ दिया गया। वह अश्व दौड़ते जाकर सीधे वाल्मीकि के आश्रम के निकट पहुँचा। घोड़े के भाल पर बंधे स्वर्ण-पत्र को पढ़ कर कुश-लव ने उसे रामचन्द्रजी के यागाश्व के रूप में पहचान लिया और उसे पकड़ कर बांध दिया।

घोड़े को छुड़ाने जाकर शत्रुघ्न, भरत और लक्ष्मण कुश-लव के साथ युद्ध करके

पर आसीन भूदेवी बाहर आईं। उस सिंहासन को नाग कन्याएँ ढो रही थीं। भूदेवी सिंहासन से उतर पड़ीं, उन्होंने सीताजी को इस प्रकार अपने दोनों हाथों से उठाकर सिंहासन पर अपनी गोद में बिठा लिया जैसे कोई माता अपनी पुत्री को बिठा लेती है। इसके बाद पृथ्वी फिर से कांप उठी। अयोध्या नगर थर्रा उठा। मगर मकानों का एक भी खपरैल नहीं गिरा। तब सीताजी के साथ भूदेवी पृथ्वी के गर्भ में चली गईं। पृथ्वी इस तरह जुड़ गई, मानों वहाँ पर कोई जमीन की फटास तक न हुई हो। सब लोग चकित हो इस दृश्य को देख रहे थे। कुछ ही पलों में यह सारी घटना घट गई।

रामचन्द्रजी ने क्रोध में आकर पृथ्वी को तोड़ने का संकल्प किया और धनुष पर बाण चढ़ाया। उस वक़्त आसमान से यह अदृश्य वाणी सुनाई दी–"रामचन्द्रजी! रघुवंश के समस्त राजाओं ने शांति और सुख पूर्वक पृथ्वी पर शासन किया। ऐसी हालत में आप ही सीताजी के द्वारा शपथ कराकर उन्हें अपने पीहर भेजकर आवेश में क्यों आ जाते हैं?" इसपर रामचन्द्रजी ने अपना धनुष उतारा, और अपना सर झुका लिया।

तब रामचन्द्रजी कुश-लव को युवराजाओं के रूप में सिंहासन बिठाकर शोक सागर में डूब गये।

"अश्वमेध याग अब भी चल रहा है। यागाश्व उत्तर से पूर्वो दिशा में जा रहा है। लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न सेना सहित उसके साथ जा रहे हैं!" यों भद्र ने अपनी कहानी समाप्त की।

शिला प्रतिमा की भांति आँसू बहाते यह कहानी सुनने वाला हनुमान आँसू पोंछकर उठ खड़ा हुआ और बोला–"मैं इसी वक़्त रामचन्द्रजी के पास जा रहा हूँ। तुम मेरे पीछे चले आओ।" यों भद्र को सुनाकर हनुमान ने अपना गदा कंधे पर रख लिया, आसमान में उड़कर अयोध्या की ओर चला गया।

रुरु और प्रमद्वरा

सैंकड़ों साल पहले सिंधु और सरस्वती नदियों के प्रदेश में एक अनोखी सभ्यता का विकास हुआ है। उस समय की जनता ने प्रकृति और देवताओं के साथ अपना निकट संपर्क रखते जीवन-यापन किया था।

उन में वेदकर्ता ऋषि भी हैं। उन लोगों ने सुखी जीवन और दीर्घ आयु, जन्म और मृत्यु तथा जन्म के रहस्यों के बारे में भी गंभीरतापूर्वक विचार किया था। रुरु नामक युवक की कहानी उसी युग की है।

रुरु एक ऋषि-पुत्र था। ऋषि ने प्रमद्वरा नामक एक गंधर्व कन्या को पाला। ऋषि-पुत्र और प्रमद्वरा दोनों जंगलों तथा नदी तटों पर स्वेच्छापूर्वक तथा संतोष के साथ खेलते रहें।

जब वे दोनों विवाह के योग्य बने, तब उनका विवाह निश्चय हुआ। विवाह के पहले दिन रुरु जंगल में चला गया और प्रमद्वरा के वास्ते फूल चुन लाया। वहाँ से लौटते हुए प्रमद्वरा ने उसे देख लिया।

अचानक एक सांप आकर प्रमद्वरा को डंसकर चला गया। रुरु ने प्रमद्वरा के चहरे को विवर्ण होते देखा। प्रमद्वरा को गिरते देख उस ने थाम लिया।

प्रमद्वरा की मृत्यु उसी वक्त नहीं हुई। रुरु की पुकार सुनकर उसने आँखें खोलकर देखा। मगर उसकी आवाज़ क्षीण हो गई। उसकी आँखें बंद हुई।

ऋषियों की बस्ती की नारियाँ आकर प्रमद्वरा की लाश को ले गईं। रुरु बड़ी देर तक स्तब्ध हो बैठा ही रहा। उसने सोचा—उस से प्रमद्वरा को अलग करने वाली यह मृत्यु क्या है?

रुरु अपने प्रारब्ध की निंदा करते हुए कई दिनों तक जंगल में घूमता रहा। उसे सांत्वना देने की किसी ने हिम्मत न की। यह सोचकर डर के मारे सब लोग चुप रहे कि कहीं रुरु उन्हें शाप न दे।

अंत में कामदेव ने प्रत्यक्ष होकर रुरु को यमलोक में जाने का मार्ग बताया।

इस पर रुरु यमलोक में पहुँचा। उस लोक में रहने वाले भयंकर यम के दूतों की परवाह किये बिना रुरु सीधे यमराज के सामने जा पहुँचा।

मगर यमराज प्रार्थनाओं तथा बखशीस के प्रलोभन में न आये। उसे मालूम हुआ कि रुरु अपनी आधी आयु त्यागने को तैयार हो जाने पर ही प्रमद्वरा जीवित हो सकती है। इस पर संकोच किये बिना रुरु ने अपनी आधी आयु समर्पित की।
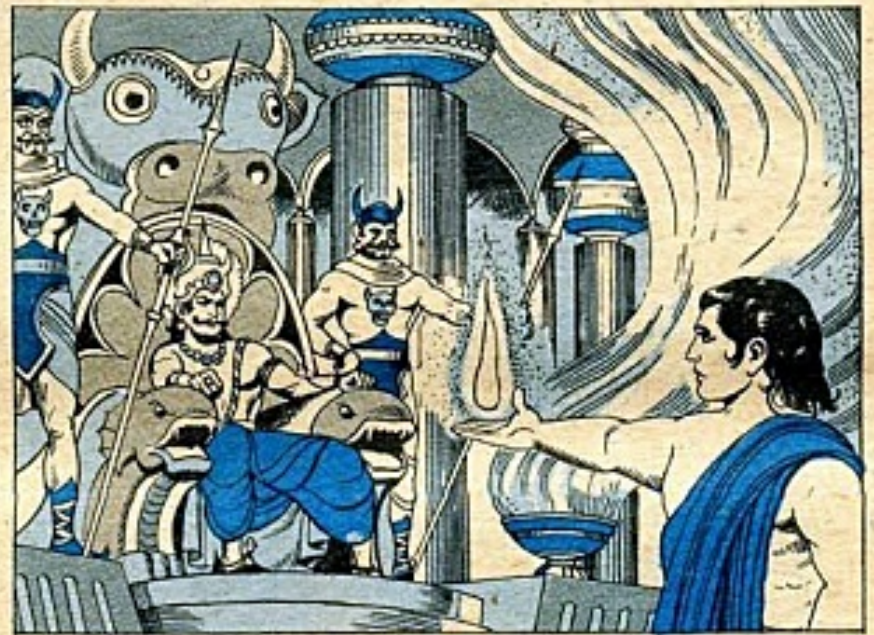
दूसरे ही क्षण रुरु अपने को पृथ्वीलोक में प्रमद्वारा के निकट पाया। दोनों ऐसे दीख रहे थे, मानों अभी अभी नींद से जाग उठे हो! उन के विवाह में अनेक ऋषियों ने भाग लिया और हृदय पूर्वक उन्हें आशीर्वाद दिये।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक आदमी कमीज़ बनाने के ख़्याल से कपड़ा ख़रीदकर दर्जी के पास ले गया और कमीज़ सिलाकर देने को कहा। दर्जी ने कपड़ा माप कर बताया–"साहब, यह कपड़ा कमीज़ के लिए काफी नहीं है।"

वह आदमी दूसरे दर्जी के पास पहुँचा। उस दर्जी ने बताया–"कपड़ा कमीज़ के लिए काफी है। आप दो दिन बाद आकर ले जाइए।"

दो दिन बाद वह व्यक्ति दर्जी के घर कमीज़ लेने गया। दर्जी का लड़का उसी के कपड़े जैसे कपड़ा पहने खेलते दिखाई दिया। दर्जी से कमीज लेकर उस व्यक्ति ने पहनकर देखा। कमीज़ बराबर बनी थी।

इसके थोड़े दिन बाद पहला दर्जी जब उसे दिखाई दिया, तब उस व्यक्ति ने पूछा–"तुमने तो कमीज़ के लिए कपड़ा काफी नहीं बताया; पर दूसरे दर्जी ने मेरे लिए कमीज़ बनाकर बचे कपड़े में अपने बेटे के लिए भी एक कमीज़ बना ली है। इसका तुम क्या जवाब देते हो?"

"उस दर्जी के लड़के की उम्र क्या है?" पहले दर्जी ने पूछा।

"छे साल की।" उस व्यक्ति ने बताया।

"फिर क्या? मेरे लड़के की उम्र बारह साल की है।" पहले दर्जी ने झट से जवाब दिया।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें–"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें अप्रैल १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के जून '७८ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

फ़रवरी मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "लकीर का फकीर"

पुरस्कृत व्यक्ति: **श्री सुधीर रैना,** C/o डॉ. सुरेश कौल, सिविल डिस्पेन्सरी, चलोला, ऊना

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जून १९७८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Srivatsa S. Vati

★

V. Muthuraman

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों ।

★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा ।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा ।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

फ़रवरी के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : धागों का कमाल !

द्वितीय फोटो : फूलों का जमाल !!

प्रेषक : गटूकमल अग्रवाल, द्वारा एन. एस. अग्रवाल, पो. कारंजा, जि. अकोला (महा.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी ।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor : NAGI REDDI.